ISSN-0970-6518

हरियाणा खेती

वर्ष 54 अंक 4

वार्षिक चंदा ₹ 150 अप्रैल, 2021 आजीवन सदस्यता ₹ 1500

प्रकाशन अनुभाग
विस्तार शिक्षा निदेशालय
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा खेती

वर्ष : 54
अंक : 04

अप्रैल 2021
चैत्र-वैशाख, शक संवत् 1943

मूल्य : ₹ 15.00
पृष्ठ : 36

www.hau.ac.in/page/haryanakheti

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.74 पु. (2) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित
© कापीराइट प्रकाशकाधीन

मुख्य संरक्षक
प्रो. समर सिंह
कुलपति

तकनीकी सलाहकार
डॉ. बी. आर. काम्बोज
निदेशक, विस्तार शिक्षा
(अतिरिक्त प्रभार)

सह-निदेशक (प्रकाशन)
डॉ. एच. एस. सहारण

सम्पादक
डॉ. सुषमा आनन्द
सह-निदेशक (हिन्दी)

संकलनकर्त्ता
डॉ. सूबे सिंह
सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)

डीटीपी एवं आवरण सज्जा
राजेश कुमार
प्रकाशन अनुभाग

संपादकीय कार्यालय
विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय
हिसार, दूरभाष : 01662-255274

हरियाणा खेती में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

हरियाणा खेती मंगवाने की दरें :
आजीवन सदस्यता : ₹1500 **(30 वर्ष के लिए)**
वार्षिक : ₹150
पत्रिका न मिलने की शिकायत के लिए hkheti.helpdesk@gmail.com पर ईमेल करें। हरियाणा खेती में सुझाव या आप किस विषय पर जानकारी चाहते हैं, के लिए भी इसी ईमेल पर लिखें या संपर्क करें। दूरभाष: 01662-255274

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें
प्रकाशन अनुभाग
विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

इस अंक में

सूरजमुखी की खेती : दोहरा लाभ लें
श्वेता, नीलम एवं कौटिल्य 1

घीया की वैज्ञानिक खेती
राजेश कथवाल, अरविन्द सिंह मलिक एवं सुमित देसवाल ..2

गुलाब के मूल्य संवर्द्धित उत्पाद
सुशील कुमार, विकास हुड्डा एवं निर्मल कुमार 3

हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय गीत
विरेंद्र सिंह हुड्डा 3

सूत्रकृमियों का प्रबंधन तथा उपचार
दविंदर सिंह, सुमित देसवाल एवं विक्रम 4

श्वेत दूधिया खुम्ब की उत्पादन तकनीक
राकेश कुमार चुघ, मनमोहन सिंह एवं जगदीप सिंह 5

सुबबुल : एक संभावित चारा वृक्ष
रविंद्र सिहँ ढिल्लों, छवि सिरोही एवं एस. के. ढांडा.....7

सल्फर: फसलों का एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व
मनजीत, पारस कम्बोज एवं एस. के. ठकराल 8

जल बचाने के लिए कुछ सुझाव
राम नरेश एवं संजय कुमार.....9

जड़ गाँठ सूत्रकृमि : ट्राइकोडर्मा से जैविक नियंत्रण
दीपक कुमार, हरजोत सिंह सिद्धू एवं विनोद कुमार.....10

गर्मी से मधुमक्खियों का बचाव कैसे करें
भूपेन्द्र सिंह, नरेंद्र कुमार एवं दीलिप कुमार 11

अनार के रोग व रोकथाम
राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण 12

मौसमी फल एवं सब्जियों का कोविड 19 के परिप्रेक्ष्य में सुरक्षित प्रयोग
वीनू सांगवान एवं भव्या संधु 17

सूक्ष्मजीवों द्वारा विषाक्त पदार्थों का जैव निम्नीकरण
कविता रानी, निधि शर्मा एवं लीलावती.....18

छपाई करने की विभिन्न प्रकार की विधियाँ
ललिता रानी एवं निशा आर्य.....19

बायोगैस: अपशिष्ट से ऊर्जा
पवन कुमार, राज कुमार एवं नरेन्द्र कुमार.....21

प्रीडायबिटीज़ : कारण, लक्षण व उपचार
उर्वशी नांदल एंव मन्जू गुप्ता 22

कृषि कौशल में असीम सम्भावनाएं
सूर्यपाल सिंह, हर्षिता सिंह एवं सज्जन सिंह 24

बीज उत्पादन पर कोरोना महामारी के दुष्प्रभाव
अमित कुमार, अक्षय भूकर एवं पुनीत राज एम. एस.....25

फल व सब्जी उत्पादन में नीम : एक वरदान
सुरेंद्र मित्तल, रूपाक्षी एवं काजल 25

गर्मियों में अल्ट्रावायलेट वस्त्रों का महत्व
मोना वर्मा एवं नीलम सैनी.....27

फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन
नरेंद्र कुमार, कमला मलिक एवं कनिष्क वर्मा 28

कृषि में फ्लाई ऐश का उपयोग
गौरव चोपड़ा, सविता रानी एवं लीलावती 30

कार्नेशन फूल की खेती : एक महत्त्वपूर्ण विकल्प
राजेश लाठर, वंदना एवं गुरनाम सिंह.....31

स्थाई स्तम्भ

अप्रैल मास के कृषि कार्य 13

आजीवन सदस्यों के लिए आवश्यक सूचना

''हरियाणा खेती'' के पंजीकृत सभी आजीवन सदस्यों को यह सूचित किया जाता है कि हम मासिक पत्रिका ''हरियाणा खेती'' की आजीवन सदस्यता को पंजाब कृषि विश्वविद्यालय की तर्ज पर **(30 वर्ष की अवधि)** के लिए कर रहे हैं। जिन पंजीकृत सदस्यों की सदस्यता को 30 वर्ष या इससे अधिक हो चुके हैं उन्हें हम सितम्बर माह से हरियाणा खेती पत्रिका नहीं भेज पाएंगे। जिन सदस्यों की सदस्यता समाप्त हो रही है वे 1500 रुपये आजीवन **(30 वर्ष के लिए)** या 150 रुपये वार्षिक देकर अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करवा सकते हैं।

- सह-निदेशक प्रकाशन

सूरजमुखी की खेती : दोहरा लाभ लें

✍ **श्वेता, नीलम एवं कौटिल्य**
सस्य विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सूरजमुखी दुनिया में वनस्पति तेल के प्रमुख स्रोत के रूप में उगाई जाने वाली सबसे महत्वपूर्ण तेल बीज फसल में से एक है। भारत में वनस्पति तेल उत्पादन की राष्ट्रीय प्राथमिकता के कारण इसे लोकप्रियता मिली है। हरियाणा के किसान इस फसल को पर्याप्त क्षेत्र में उगा रहे हैं। अच्छी पैदावार सुनिश्चित करने के लिए, इस फसल को भारी नुकसान से बचाने के लिए जिम्मेदार बीमारियों का प्रबंधन आवश्यक है।

सूरजमुखी तिलहनी फसल है, जिस पर प्रकाश का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है इसका अर्थ है कि यह फोटानेंसेंसिव है। इसके बीज में तेल की मात्रा 45-50% होती है।इसके तेल में लीनोलिक मौजूद होते हैं जो कोलेस्ट्रोल को नियंत्रित करते हैं। इसकी गुणवत्ता के कारण इसके तेल को हृदय रोगियों के लिए दवा के रूप में काम किया जाता है। सूरजमुखी देखने में सुंदर होने के साथ-साथ अधिक फायदेमंद भी है। इसके फूल और बीज में कई औषधीय वर्ण पाए जाते हैं।यह कई बीमारियों से बचाता है। इसके अलावा सूरजमुखी के तेल का सेवन करने से लीवर सही तरीके से काम करता है। इसके तेल से त्वचा स्वस्थ बनती है और बाल भी मज़बूत होते हैं।

भूमि का चुनाव एवं खेत की तैयारी : सूरजमुखी की फसल हर प्रकार की मिट्टी में उगाई जा सकती है। जहां पर पानी निकास का अच्छा प्रबंध हो। अम्लीय और क्षारीय ज़मीनों में इसकी खेती करने से बचना चाहिए। अधिक पानी सोखने वाली भारी ज़मीन इस के लिए बहुत अच्छी होती है। खेत में भरपूर नमी न होने पर पलेवा लगाकर जुताई करनी चाहिए। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद साधारण हल से 2- 3 बार जुताई कर के खेत को भुरभुरा बना लेना चाहिए या रोटावेटर का इस्तेमाल करना चाहिए।

सूरजमुखी तेल व बीजों के फायदे : सूरजमुखी के फूलों व बीजों में कई औषधीय गुण छिपे होते हैं। दिल को स्वस्थ रखने से लेकर यह कैंसर जैसी जानलेवा बीमारी से बचाव करता है। इसके अलावा सूरजमुखी के तेल का सेवन करने से लीवर सही तरीके से काम करता है और ऑस्टियोपरोसिस जैसी हड्डियों की बीमारी भी नहीं होती है, यह त्वचा को निखारने के साथ बालों को भी मज़बूत बनाता है। इसके बीज न केवल स्वादिष्ट होते हैं ,बल्कि इन्हें खाने से पोषण भी मिलता है और यह पेट भी भरते हैं। सूरजमुखी के बीज सभी फूड स्टोर्स में आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। सूरजमुखी के बीजों को खाने से हार्ट अटैक का खतरा कम होता है, कोलेस्ट्रॉल घटता है, त्वचा में निखार आता है तथा बालों की भी ग्रोथ होती है।

सूरजमुखी उत्पादन में वृद्धि के लिए कुछ महत्वपूर्ण बातें : खेत को अच्छे तरीके से तैयार करें। संकर किस्मों के बीज का उपयोग करें। जब नए बीज का उपयोग रोपण के लिए किया जाता है, तब इस तेल के साथ इलाज करें। सूरजमुखी की बुवाई को जनवरी से फरवरी अंत तक पूरा किया जाना चाहिए। फूल आने के समय बोरेक्स का छिड़काव करें। फिर बीज अच्छी गुणवत्ता के साथ आते हैं।

किस्में : समय पर बिजाई के लिए संकर किस्में - के बी एस एच-1, एम एस एफ एच-8, पी ए सी 36, के बी एस एच-44, एच एस एफ एच-848 तथा पी सी एस एच 234

पछेती बिजाई के लिए : एम एस एफ एच 17, पी ए सी 1091, सनजीन 85, प्रोसन 09 तथा एच एस एफ एच-848

उन्नत किस्में : ई सी 68415 सी (हरियाणा सूरजमुखी नं.1) समान रूप से पकती है। इसकी औसत पैदावार 8 क्विंटल प्रति एकड़ होती है तथा यह पकने में 90 दिन लेती है।

एच एस एफ एच 848 : इस संकर किस्म की मुख्य विशेषताएं इस प्रकार से हैं : यह अधिक उपज देने वाली संकर किस्म है। इसकी औसत पैदावार 22-25 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है। इसके दानों में तेल की मात्रा 40 प्रतिशत होती है। यह किस्म पकने में 95-100 दिन लेती है अत: इस किस्म की समय पर तथा पछेती बिजाई के लिए सिफारिश की जाती है। इसके पौधों की ऊँचाई (160-180 सैं.मी.) तथा फूलों का आकार मध्यम होता है। छत्ते में दाने पूरे भरे होते हैं। पकने से पहले इसके फूल/छत्ते नीचे की ओर झुक जाते हैं। अत: पक्षियों द्वारा कम नुकसान होता है। यह सभी प्रकार की बीमारियों के प्रति रोगरोधी है।

बुवाई का समय एवं विधि : सूरजमुखी की फसल प्रकाश संवेदी है, अत: इसे वर्ष में तीन बार रबी, खरीफ एवं जायद सीजन में बोया जा सकता है। जायद मौसम में सूरजमुखी को फरवरी के प्रथम सप्ताह से फरवरी के मध्य तक बोना सबसे उपयुक्त होता है, जायद मौसम में कतार से कतार की दूरी 4-5 सैं.मी. व पौध से पौध की दूरी 25-30 सैं.मी. की दूरी पर बुवाई करें।

बीज की मात्रा : उन्नत किस्म का 4 कि.ग्रा. तथा संकर किस्मों का 1-5 से 2 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ पर्याप्त होता है। बीज को चार से छ: घण्टे तक भिगोयें तथा बिजाई से पहले छाया में सुखा लें। उन्नत किस्म को कतारों में 45 सैं.मी. तथा संकर किस्म को 60 सैं.मी. की दूरी पर बोयें तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 सैं.मी. रखें। बीज को भूमि की नमी के अनुसार 3-5 सैं.मी. गहरा बोयें।

खाद एवं उर्वरक : 24 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 16 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति एकड़ उन्नत किस्मों एवं 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन तथा 20 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति एकड़ संकर किस्म (हाइब्रिड) के लिए पर्याप्त है। पूरी फास्फोरस व आधी नाइट्रोजन बिजाई के समय तथा शेष नाइट्रोजन प्रथम सिंचाई पर डालें।

सिंचाई : खेत में पर्याप्त नमी बनाये रखें। अच्छी पैदावार के लिये 4-6 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। प्रथम सिंचाई बिजाई के 30-35 दिन बाद व अंतिम सिंचाई बिजाई के 75-80 दिन बाद करें।

कटाई : फसल की कटाई उस समय करें जब कि फूल का पिछला हिस्सा नींबू जैसा पीला रंग का हो जाए और फूल झड़ जाएं तो फसल तैयार समझना चाहिए। इस स्थिति में फूल को काटकर खलिहान में लायें व 3-4 दिन खलिहान में सूखने के बाद डंडों से पीटकर बीज निकालें।

उपज : सूरजमुखी की फसल 90-105 दिन में पककर तैयार हो जाती है व उन्नत विधि से उत्पादन करने पर 18-20 क्विंटल प्रति हैक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है। *

घीया की वैज्ञानिक खेती

राजेश कथवाल, अरविन्द सिंह मलिक एवं सुमित देसवाल
रामधन सिंह बीज फार्म
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत फल और सब्जी उत्पादन में चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। सब्जी के अधीन 2015-16 में 10.3 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्र था। 2017-18 में 649.69 हजार टन घीया पैदा करके बिहार घीया उत्पादन में प्रथम स्थान पर रहा । उत्तर प्रदेश 427.81 हज़ार टन घीया पैदा कर द्वितीय स्थान पर रहा। हरियाणा में घीया उत्पादन 2017-18 में 364.69 हज़ार टन रहा जो भारत में तृतीय स्थान पर रहा। 2017-18 में भारत में कुल 2461.84 हज़ार टन घीया उत्पादित किया गया।

घीया (*लेग्नेरिया सिसरेरिया*, 2 एन = 22) एक ऐसी सब्जी है जिसे भारतीय जीवन पद्धति में आराम से स्थान प्राप्त है। इसे किसानों के बटोड़ों में महिलाएं लगा लेती हैं और शहरी घरों में गेट के आगे बची ज़मीन में इसे बो दिया जाता है। इस सब्जी को पकाने में समय भी कम लगता है। कुछ लोग इसका प्रयोग जूस के रूप में डायबिटीज़ के इलाज में करने लगे हैं। साथ ही इसके कोफ्ते भी बनाए जाते हैं। घीया और चने की दाल की सब्जी भी काफी लोकप्रिय है। यह उष्ण अफ्रीका से उत्पन्न हुई है। यह सब्जी पूरे वर्ष उपलब्ध रहती है। यह हृदय के लिए टॉनिक का कार्य करती है। इसके पत्तों का प्रयोग पीलिया के इलाज के लिए किया जाता है। यह खांसी, कब्ज़ व अंधराता रोग के इलाज में प्रयोग की जाती है। यह 3.5 से 4 महीने की फसल है।

उन्नत किस्में :

पूसा समर प्रोलीफिक लोंग - यह किस्म गर्मी व बरसात दोनों के लिए उपयुक्त है यानि किसान दोनों मौसम में इसे आराम से बो सकते हैं। इसे 1971 में विकसित किया गया था। इसमें फल काफी अच्छे लगते हैं। कच्चे फलों की लम्बाई 4-50 सैं.मी. व फलों का रंग पीला हरा होता है।

पूसा समर प्रोलीफिक राऊण्ड - यह किस्म भी गर्मी व बरसात दोनों मौसम के लिए उपयुक्त है। इसमें फल काफी अच्छे लगते हैं और बेलों की बढ़वार अच्छी होती है। कच्चे फल 15 गुणा 18 सैं.मी. घेरे के गोल व हरे रंग के होते हैं।

घीया हिसार 22 - यह किस्म ग्रीष्म व वर्षा ऋतु दोनों मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। इसमें फल काफी लगते हैं और बेलों की बढ़वार भी अच्छी होती है। कच्चे व खाने योग्य फलों की औसत लंबाई लगभग 30 सैं.मी. व इनका रंग हल्का हरा होता है। इसकी औसत पैदावार 100-120 क्विन्टल प्रति एकड़ है।

हिसार घीया संकर 35 - यह घीया की एक संकर किस्म है। इसके फल आकार में लगभग बेलनाकार तथा दर्मियाने होते हैं। यह किस्म ग्रीष्म व वर्षा ऋतु दोनों मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। बेल पर फल अधिक संख्या में लगते हैं तथा बेलों की बढ़वार भी अच्छी होती है। कच्चे व खाने योग्य फलों की औसत लम्बाई लगभग 25-30 सैं.मी. व फलों का रंग हल्का होता है। इसकी औसत पैदावार 120-140 क्विंटल प्रति एकड़ है।

[1]सब्जी विज्ञान विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

भूमि की तैयारी : बिजाई से 3-4 सप्ताह पहले गोबर की सड़ी हुई खाद खेत में मिला दें व 3-4 बार जुताई करें। हर जुताई के बाद सुहागा लगाएं।

बिजाई का समय : गर्मी की फसल के लिए फरवरी-मार्च तथा बरसात की फसल के लिए जून -जुलाई का समय उपयुक्त होता है।

बीज की मात्रा : एक एकड़ के लिए 1.5 - 2 किलोग्राम बीज काफी रहता है। बिजाई से पहले बीज को किसान भाई यदि रात को भिगो दें तो इससे अंकुरण अच्छा होता है।

बिजाई की विधि : घीया के बीज को उठी हुई क्यारियों में नालियों के किनारे पर बोएं जिनकी चौड़ाई 2 मीटर तथा लम्बाई सुविधानुसार रखें। 2 या 3 बीज एक जगह पर 3-4 सैंटीमीटर की दूरी पर बोयें। पौधों के बीच की दूरी 60 सैं.मी. रखें।

खाद व उर्वरक

तालिका 1. खाद व उर्वरक विवरण

क्रम सं.	विवरण	मात्रा प्रति एकड़	डालने का समय
1.	गोबर की खाद	6 टन	बिजाई से 3-4 सप्ताह पहले
2.	यूरिया	43 किलोग्राम	21.5 किलोग्राम बिजाई के समय, 10.25 किलोग्राम बिजाई के तीस दिन बाद व 10.25 किलोग्राम फूल आने पर नालियों में डालकर मिट्टी चढ़ाएं।
3.	डी.ए.पी.	25 किलोग्राम	पूरी मात्रा बिजाई के समय
4.	एम.ओ.पी.	14 किलोग्राम	बिजाई से 3-4 सप्ताह पहले

सिंचाई : गर्मी के मौसम में 5-7 दिनों के व बरसात के मौसम में 8-10 दिन के अन्तर पर सिंचाई करें। बरसात के मौसम में सिंचाई वर्षा पर निर्भर करती है।

तैलीय पानी के साथ जिप्सम का प्रयोग : तैलीय पानी के एक मिलीलीटर तुल्यांक प्रति लीटर आर.एस.सी को निरस्थीकरण करने के लिए जिप्सम 32 किलोग्राम (80 प्रतिशत शुद्धता) प्रति सिंचाई, प्रति एकड़ तथा 8 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति एकड़ डालने से घीया की फसल पर तैलीय पानी का प्रभाव कम पड़ता है और अच्छी पैदावार ली जा सकती है।

फलों की तुड़ाई व पैदावार : फल कच्ची अवस्था में तोड़ने चाहिएं जब उनक रंग पीला-हरा हो। अधिक पके फल खाने के लिए उपयुक्त नहीं होते। इसकी पैदावार 40 क्विन्टल प्रति एकड़ व ग्रीष्म ऋतु में 60 क्विन्टल प्रति एकड़ होती है। *

आवश्यक सूचना

''**हरियाणा खेती**'' मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें। **सह-निदेशक प्रकाशन**

गुलाब के मूल्य संवर्द्धित उत्पाद

✍ **सुशील कुमार, विकास हुड्डा एवं निर्मल कुमार**
कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहाबाद
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गुलाब सभी पुष्पों में एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखता है तथा प्राचीनकाल से ही इसकी सुंदरता, रूप, आकार, रंग, औषधीय गुण एवं मनमोहक सुगंध के कारण इसको बहुत महत्व दिया जाता है। इसका उपयोग सजावट, सुंदरता, गुलदस्ते, हार बनाने के साथ-साथ मूल्य संवर्द्धित उत्पाद जैसे गुलाब-जल, गुलाब तेल, गुलकन्द, इत्र व गुलाब शरबत बनाने में व्यावसायिक रूप से किया जाता है।

गुलाब मूल्य संवर्द्धन का महत्व : सभी फूलों की तरह ही गुलाब की कटाई उपरांत जीवन आयु लघु होती है इसलिए भंडारण के तकनीकी साधनों की कमी तथा मुख्य मौसम में प्रचुर मात्रा में होने के कारण किसानों को उचित मूल्य नहीं मिल पाता।

गुलाब का मूल्य संवर्द्धन एक ऐसी तकनीक है जो न केवल गुलाब को विभिन्न उत्पादों में बनाकर उन्हें लंबे समय तक सुरक्षित रखता है, अपितु किसानों को इन उत्पादों से लाभकारी मूल्य भी दिलवाता है। उचित विधि से गुलाब को कई मूल्य संवर्द्धित उत्पादों में परविर्तित कर सकते हैं।

गुलाब जल : गुलाब जल एक उपयोगी उत्पाद है जो कि गुलाब की पंखुडियों से प्राप्त होता है। गुलाब जल कई विधियों से बनाया जाता है जिसमें से वाष्प या आसवन विधि ज्यादा उपयोग में लाई जाती है। गुलाब जल का उपयोग फारसी और मध्य पूर्वी देशों में मिठाइयों व शरबत में किया जाता है। इसके अलावा शादी, धार्मिक समारोह में भी इसका उपयोग बहुत किया जाता है। भारत में गुलाब जल का उपयोग आंखों को साफ करने व चेहरे पर नमी बनाए रखने के लिए किया जाता है।

गुलाब शरबत : गुलाब शरबत भी गुलाब की पत्तियों द्वारा बनाया जाता है। गुलाब शरबत अपनी ठंडी प्रकृति के कारण कई रोगों में सहायक होता है। आखों में जलन होना, सूखापन या आंखें लाल होना जैसी समस्याओं के निवारण के लिए यह उपयुक्त है।

गुलकन्द : गुलकन्द एक बहुमूल्य गुलाब मूल्य संवर्द्धित उत्पाद है जो कि ताज़े गुलाब की पत्तियों व चीनी को मिक्स करके बनाया जाता है। यह अम्मलता के ईलाज के लिए घरेलू उपचार है। यह एक टॉनिक के रूप में रक्त शुद्ध करने, दृष्टि और स्मृति सुधार में उपयोग किया जाता है। यह एक आसानी से बनाया जा सकने वाला उत्पाद है जिसकी कीमत बाज़ार में लाभ देने वाली है।

गुलाब तेल : गुलाब तेल पंखुड़ियों से निकलने वाला एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक उत्पाद है। आकर्षित सुगंध होने के साथ-साथ इसमें औषधीय गुण भी होते हैं। इसलिए आयुर्वेदिक उपचार में भी इसका उपयोग किया जाता है। गुलाब तेल गुलाब जल की ही तरह वाष्प आसवन, जल आसवन विधियों से निष्कर्षित किया जाता है। गुलाब की ''रोसा सेंटिफोलिया'' और ''रोसा दमिस्केना'' किस्में गुलाब तेल के लिए अच्छी स्रोत हैं।

गुलाब की सूखी पत्तियां : गुलाब की पत्तियों को सुखाकर भी इनको बाज़ार में गैर-मौसम में बेचकर उचित मूल्य प्राप्त कर सकते हैं। गुलाब की सूखी पत्तियों का उपयोग मिठाइयों, औषधीय उत्पाद, अगरबत्ती व सौंदर्य प्रसाधनों में किया जाता है।

हर्बल गुलाब चाय : हर्बल गुलाब चाय बनाने के लिए गुलाब की पंखुड़ियों अथवा गुलाब की सुगंध उपयोग में लाई जाती है। आजकल बाज़ार में विभिन्न प्रकार की गुलाब की सुगंध वाली हर्बल चाय आसानी से उपलब्ध है।

पॉट पौरी : यह पौधों के विभिन्न हिस्सों का मिश्रण है जो घर के अंदर एक प्राकृतिक सुगंध प्रदान करता है। यह एक सजावटी कटोरे में या कपड़े से बने थैलों में रखा जाता है। गुलाब के फूल, पंखुड़ियां और पत्तियां पॉट पौरी के लिए अच्छी आधार सामग्री बनाते हैं।

रोज़ हिप्स : रोज़ हिप्स का तात्पर्य गुलाब की पंखुड़ियों के नीचे के हिस्से से होता है। जिसमें गुलाब के बीज होते हैं। ताज़ा रोज़ हिप्स में विटामिन-सी प्रचुर मात्रा में होता है जिसके कारण इसे ठंड और विटामिन-सी की कमी के ईलाज के लिए उपयोग किया जाता है। *

हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय गीत

✍ **विरेंद्र सिंह हुड्डा**
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि ज्ञान का जो है हिमालय, कृषि शिक्षा का है देवालय
वो है हमारा सबसे प्यारा, हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय,
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय

धर्म है जिसका कृषक की सेवा, माने किसान को अपना देवा,
कृषक का बन सच्चा साथी, कृषि में लायी हरित क्रांति,
मित्र किसान का है हर पथ पर, उन्नति की राह पे सदा अग्रसर,

खेती का करने को उद्धार, करता शिक्षा शोध व प्रसार,
वो है हमारा सबसे प्यारा, हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय
चौधरी चरण सिंह, हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय

खेती का करने को उत्थान, होते यहाँ नए अनुसन्धान,
वैज्ञानिक विधि नई तकनीकें, बनती फसलों की उन्नत किस्में,
उच्च कोटि के शोध और शिक्षण, देते यहाँ पे सब शिक्षक गण,

कहीं मेले कहीं गोष्ठियां सजती, कृषि ज्ञान की गंगा बहती,
वो है हमारा सबसे प्यारा, हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय
कृषि ज्ञान का जो है हिमालय, कृषि शिक्षा का है देवालय

ये है हमारा चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय

सूत्रकृमियों का प्रबंधन तथा उपचार

✍ **दविंदर सिंह, सुमित देसवाल एवं विक्रम**
सब्जी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सूत्रकृमि एक प्रकार के सूक्ष्म दर्शी जंतु हैं जोकि पृथ्वी पर पाये जाने वाले बहुकोशिकीय जीवों का एक बहुत बड़ा समूह है। वे ताज़े पानी, समुद्री और स्थलीय वातावरण में सर्वव्यापी हैं। यह हवा को छोड़कर लगभग हर जगह जैसे कि समुंदरों, नदियों तथा मिट्टी सभी स्थानों पर पाए जाते हैं। सूत्रकृमि जल स्नेही जंतु हैं जो मिट्टी में भी पानी की सतह में ही पाए जाते हैं। मिट्टी में पाए जाने वाले सूत्रकृमियों को इनसे बड़े केंचुओं से भ्रमित नहीं होना चाहिए। भूमि के एक भाग से दूसरे भाग में इनकी किस्म अलग-अलग हो सकती हैं। भूमि में वास करने वाले सूत्रकृमियों को मुक्त सूक्ष्म जीव भक्षक तथा पौध परजीवी सूत्रकृमि में विभाजित किया जा सकता है। पौध परजीवी सूत्रकृमि हरियाली वाले क्षेत्रों में अधिक पाए जाते हैं। इस प्रकार के सूत्रकृमि आकार में 0.5-2.0 मिलीमीटर तक लंबे हो सकते हैं। इनमें एक खोखली भाले रूपी सूई जैसा सटाईलेट होता है, जो पौधे की कोशिकाओं को छेदकर रस चूसने में सहायक होता है।

सूत्रकृमि क्षति के लक्षण व पहचान : जड़ गांठ सूत्रकृमि मृदा जनित होते हैं जो जड़ों के अंदर घुस कर जल व खाद्य संवाहक ऊतकों में विशाल कोशिकाएं गांठें बना लेते हैं। शुरू में यह गांठें छोटी तथा स्पष्ट होती हैं परंतु समय के साथ बढ़कर स्पष्ट दिखाई देने लगती हैं।

सूत्रकृमि मिट्टी में रहते हुए नई कमज़ोर जड़ों को खाकर उनकी कोशिकाओं से लगातार रस चूस कर उन्हें कमज़ोर बना देते हैं । जिससे कि शुरू में पत्ते पीले, पौधे छोटे तथा कमज़ोर रह जाते हैं तथा इससे पैदावार में कमी आती है।

सूत्रकृमियों द्वारा क्षति से होने वाले लक्षण काफी हद तक मिट्टी में उर्वरकों तथा उपजाऊ तत्वों की कमी से मेल खाते हैं। जिसे किसान भली-भांति समझ नहीं पाते और फसल का नुकसान हो जाता है। सूत्रकृमियों द्वारा क्षति का पता लगाने के लिए पौधों को उखाड़ कर उनका निरीक्षण किया जाना चाहिए।

सूत्रकृमियों का फैलाव खुले खेतों में अलग-अलग टुकड़ियों में होता है जबकि संरक्षित खेती जैसे कि पॉलीहाउस में लगभग एक समान होता है।

किसान सूत्रकृमियों द्वारा उत्पन्न गांठों में तथा दलहनी फसलों की जड़ों में मौजूद राइजोबियम की गांठों में अंतर नहीं समझ पाते हैं। इस लाभकारी राइजोबियम जीवाणु द्वारा उत्पन्न गांठों को नोचने पर आसानी से अलग हो जाती हैं, जबकि सूत्रकृमि द्वारा उत्पन्न गांठें रंगहीन व उनको नोच कर अलग नहीं किया जा सकता।

सूत्रकृमियों का प्रबंधन तथा उपचार : देश के विभिन्न क्षेत्रों में खुले खेत अथवा पॉलीहाऊस में सब्जियों की खेती करने वाले किसानों के लिए सूत्रकृमियों की जानकारी होना अति आवश्यक है क्योंकि पूर्ण रूप से जानकारी होने पर ही उनका प्रबंधन किया जा सकता है। सूत्रकृमि भूमि में रहकर पौधों की जड़ों को हानि पहुंचाते हैं अत: इनका पूर्ण विनाश संभव नहीं है अपितु विभिन्न प्रबंधन विधियों द्वारा इनकी संख्या को कम रखकर सफल व लाभकारी खेती की जा सकती है।

1. **मिट्टी की जांच :** पॉली हाऊस का निर्माण करने से पहले उस जगह की मिट्टी का परीक्षण करवाया जाना अति आवश्यक है। अगर निर्माण स्थल पर पहले सब्जियों की खेती होती रही हो तो उस जगह का चुनाव नहीं करना चाहिए क्योंकि उस स्थल पर सूत्रकृमियों के संक्रमण की अधिक संभावना हो सकती है। मिट्टी की जांच करवा कर सूत्रकृमियों के संक्रणम और संख्या का मिट्टी में पता लगाया जा सकता है।

2. **स्वस्थ नर्सरी तैयार करना :** अधिक से अधिक पैदावार व गुणवत्ता युक्त उत्पादन के लिए आवश्यक है कि स्वस्थ पौधे प्रयोग किए जाएं। नवजात पौधे स्वस्थ एवं मज़बूत होंगे तभी उसमें स्वस्थ एवं अधिक फल आयेंगे। पौध तैयार करने के लिए अच्छी प्रकार से धुली हुई प्लास्टिक ट्रे का इस्तेमाल किया जा सकता है। मृदा रहित सामग्री जैसे कोकोपीट, वर्मीक्यूलाइट तथा पर्लाइट में गोबर खाद नहीं मिलानी चाहिए तथा प्लास्टिक प्रो-ट्रे को मिट्टी के स्पर्श से बचाने के लिए किसी भी ऊंची जगह पर रखें जिससे नर्सरी पौधों को मिट्टी में पैदा होने वाले सूत्रकृमियों से बचाया जा सकता है।

3. **सूर्यतपीकरण :** हर वर्ष मई-जून के महीने में गर्मी का सूर्यतपीकरण करने से मिट्टी में सूत्रकृमियों को खत्म किया जा सकता है। सूर्यतपीकरण के लिए भूमि की हल्की सिंचाई के बाद गहरी जुताई करनी चाहिए तथा सिंचित क्षेत्र को लगभग 25 माइक्रोन पतली पॉलीथीन शीट से दो-तीन सप्ताह के लिए ढक देना चाहिए।

4. **कार्यक्षेत्र की स्वच्छता :** सूत्रकृमियों की रोकथाम के लिए यह अति आवश्यक है कि पॉलीहाऊस के आसपास की सफाई रखी जाए। सूत्रकृमि जड़ों के ऊपर या आसपास अंडे देते हैं इसलिए पिछली फसल के अवशेषों तथा जड़ को खेत में से निकाल कर जला देना चाहिए। इसके साथ-साथ खरपतवार नियंत्रण भी अवश्य करना चाहिए क्योंकि फसलोपरांत सूत्रकृमि खरपतवार पर ही पनपते हैं।

5. **खाद्य रसायनों का प्रयोग :** गोबर अथवा केंचुआ खाद को ट्राइकोडर्माहर्जियानम अथवा स्यूडोमोनासफ्लोरेसेंस द्वारा शोधित करके प्रयोग किया जा सकता है। इन जैव उर्वरकों को खाद में लगभग 2 किलोग्राम या 2 लीटर प्रति टन की दर से मिलाकर प्रयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त 20 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से ट्राइकोडर्माविरिडी को गोबर की खाद या केंचुए की खाद के साथ 100 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से रोपण बेड में मिलाना चाहिए। रासायनिक सूत्रकृमिनाशक द्वारा भी कुछ हद तक सूत्रकृमियों की संख्या पर काबू पाया जा सकता है। इसके लिए कीटनाशक का 1 से 2 किलोग्राम प्रभावकारी घटक 33 से 66 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से बिजाई अथवा रोपण से पहले मिट्टी में मिलाया जा सकता है।

उपर्युक्त प्रबंधन के अलावा फसल चक्र, ग्राफ्टिंग और मिट्टी रहित खेती (हाइड्रोपोनिक्स तथा एयरोपोनिक्स) को अपना कर भी पॉली हाऊस के अंदर सूत्रकृमियों से फसलों को बचाकर किसान अधिक से अधिक लाभ कमा सकते हैं। पॉली हाऊस में खीरे की फसल सूत्रकृमियों के प्रति काफी संवेदनशील होती है इसलिए इस फसल को बार-बार उगाने की बजाय टमाटर और शिमला मिर्च को फसल चक्र में शामिल करें। सब्जी फसलों को सूत्रकृमियों से बचाने के लिए फसल चक्र में लहसुन भी सम्मिलित किया जा सकता है। *

श्वेत दूधिया खुम्ब की उत्पादन तकनीक

✍ **राकेश कुमार चुघ, मनमोहन सिंह एवं जगदीप सिंह**
पादपरोग विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा के खुम्ब उत्पादक केवल मौसमी सफेद बटन मशरूम उत्पादन पर निर्भर हैं। शरद ऋतु में बटन मशरूम की एक या दो फसल लेने के बाद वे अपने उत्पादन कार्य को बन्द कर देते हैं तथा पूरा साल मशरूम उत्पादन नहीं कर पाते हैं। कुछ किसान ढींगरी मशरूम की एक दो फसल लेते हैं परन्तु ढींगरी का आकार भिन्न सीप की तरह होने के कारण ग्राहक इसे पसन्द नहीं करते। वहाँ पर किसान दूधिया मशरूम का उत्पादन कर सकते हैं क्योंकि दूधिया मशरूम का आकार बटन मशरूम के आकार व रूप की तरह होता है तथा यह स्वादिष्ट होती है।

श्वेत दूधिया मशरूम पहली बार पश्चिमी बंगाल में 1974 में उगाई गई थी। इसके बाद इसकी उत्पादन तकनीक अनेक वैज्ञानिकों द्वारा सरल व सस्ती तकनीक विकसित की गई जिसके द्वारा इसे आसानी से गर्म मौसमीय क्षेत्रों में उगाया जा सकता है। इसका उत्पादन पहले तमिलनाडु में अधिक किया जाता था परन्तु आज देश के अन्य राज्यों जैसे कर्नाटक, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, गोवा, केरल, आन्ध्र प्रदेश, हरियाणा, पंजाब में भी उगाई जाती है। इसकी अधिक उत्पादन क्षमता जो कि 2-3 गुणा सफेद बटन खुम्ब की अपेक्षा न केवल सरल, अधिक तापमान, अधिक नमी अधिक समय तक भण्डारण, आसान उत्पादन तकनीक, दूधिया रंग, रेशेदार तत्वों की बहुलता के कारण आकर्षण का केन्द्र है। यह निम्न बातों से दूसरी खुम्बों की अपेक्षा अच्छी है :

1. यह मशरूम अन्तरराष्ट्रीय बाज़ार के लिए एक नया मशरूम है। इस मशरूम को रिले मशरूम के रूप में जब दूसरी मशरूम के लिए उपयुक्त वातावरण नहीं होता तब यह मशरूम ली जा सकती है।
2. यह मशरूम सफेद दूध के समान रंग होने से इसे दूध छत्ता भी कहते हैं। यह आकार में शुरू की अवस्था में सफेद बटन मशरूम जैसी ही दिखाई देती है। परन्तु इसका तना मोटा एवं बड़ा गूद्देदार व दूध जैसे सफेद रंग का होता है।
3. इसकी भंडारण क्षमता दूसरी मशरूम की तुलना में अधिक है। इसे सात दिनों तक आसानी से सुरक्षित रखा जा सकता है।
4. इस मशरूम को आसानी से सुखाया, डब्बा बंदी, सूप पाऊडर व अचार बनाया जा सकता है।
5. इसकी उत्पादन तकनीक बटन मशरूम की तुलना में काफी आसान है। इसमें कम्पोस्ट की आवश्यकता नहीं होती। इसकी उत्पादन तकनीक आयस्टर मशरूम जैसी ही है परन्तु वानस्पतिक वृद्धि के पश्चात केसिंग की आवश्यकता पड़ती है।
6. एक फलनकाय का वज़न 50-60 ग्राम होता है तथा कभी-कभी यह 500 ग्राम भी होता है।
7. बाज़ार में इसकी कीमत बटन मशरूम से भी अधिक है।
8. इसके उत्पादन हेतु 30-35 डिग्री सैल्सियस तापमान एवं नमी (>80 प्रतिशत) की आवश्यकता होती है।

जलवायु/मौसम : इस मशरूम को लगाने के लिए जुलाई से अक्तूबर माह तक का समय उपयुक्त है। इस खुम्ब के लिए अधिक तापमान की आवश्यकता होती है। फफूंद का जाला फैलने के लिए 25-35 डिग्री सैल्सियस तथा नमी 80-90 प्रतिशत की आवश्यकता होती है। केसिंग के समय फसल का तापमान 30-35 डिग्री सैल्सियस तथा नमी 80-90 प्रतिशत होनी चाहिए। अधिक तापमान होने पर भी यह खुम्ब पैदावार देती है।

माध्यम का चुनाव व उपचार : ढींगरी खुम्ब की भांति इस खुम्ब को भी विभिन्न कृषि फसलों के अवशेषों जैसे गेहूं, सरसों का तूड़ा या धान की पुआल पर आसानी से उगाया जा सकता है। ध्यान रहे कि गेहूं का भूसा अच्छी किस्म का सूक्ष्मजीवों से मुक्त व अच्छी तरह से भंडारित किया हुआ होना चाहिए। जहां तक संभव हो ताज़ा सूखा भूसा जो उपयुक्त स्थान पर भंडारित किया गया हो प्रयोग करना चाहिए। भूसे को नम स्थान पर भंडारित करने से अनेक प्रतिस्पर्धात्मक फफूंद आक्रमण कर जाते हैं एवं भूसा मशरूम उत्पादन हेतु अनुपयोगी हो जाता है। अच्छी गुणवत्ता वाला भूसा लेने के बाद उपचारित किया जाता है। इसके उपचार की तीन विधियां हैं।

क) गरम पानी से उपचार : इस विधि में भूसा या धान की पुआल की कुट्टी को टाट के बोरे में भर कर इसे पानी में अच्छी तरह से कम से कम 6 से 16 घंटे तक डुबोकर रखते हैं ताकि भूसा या पुआल अच्छी तरह से पानी सोख लें। इसके बाद इस भीगे हुए भूसे से भरे बोरे को उबलते हुए गरम पानी में 40 मिनट तक डूबोकर रखते हैं। इस बात का ध्यान रखें कि पानी का तापमान 40 मिनट तक 80-90 डिग्री सैल्सियस तक बना रहना चाहिए तभी माध्यम का उपचार सफल हो सकता है। इसके बाद भूसे को गर्म पानी से निकालकर साफ फर्श पर फैला दें ताकि अधिक पानी बाहर निकल जाए तथा भूसा ठण्डा हो जाए। भूसा हमेशा पक्के फर्श पर फैलाएं तथा फर्श को 2 प्रतिशत फोर्मेलिन के घोल से उपचारित करें।

ख) रासायनिक उपचार : गर्म पानी विधि उपचार लघु स्तर पर अपनाना उचित है परन्तु बड़े स्तर पर यह अधिक खर्चीला साबित होता है। इसलिए रासायनिक विधि को अपनाया जा सकता है। ड्रम में 100 लीटर पानी लें तथा उसमें 7.5 ग्राम बाविस्टीन व 132 मि.ली. फोर्मेलिन मिलाएं। इस घोल को ड्रम में भिगोए गये भूसे पर उड़ेल दें तथा ड्रम को पॉलीथीन से ढककर उस पर वज़न रख दें। बारह से सोलह घंटे बाद ड्रम से भूसे को बाहर निकाल कर फर्श पर फैला दें ताकि अतिरिक्त पानी निकल जाए।

उत्पादन विधि :

खुम्ब को दो विधियों द्वारा उत्पादित किया जा सकता है।

(क) ट्रे विधि (ख) पॉलीथीन विधि

ट्रे विधि में माध्यम को लकड़ी की बनी हुई ट्रे या एल्युमिनियम की बनी ट्रे में लेते हैं जबकि पॉलीथीन विधि में माध्यम को पॉलीथीन की विभिन्न आकार की थैलियों में लेते हैं। उत्पादन हेतु पॉलीथीन विधि का उपयोग अधिक होता है। क्योंकि ये सस्ते दामों में उपलब्ध होती है। पाँच प्रतिशत खुम्बी का बीज (500 ग्राम बीज 10 किलोग्राम भिगोये गए भूसे) मिलाएं।

पॉलीथीन के थैलों का आकार 30 x 60 सैं.मी. या 45 x 60 सैं.मी. (100-200 गेज) में भर दें। थैलों में 1 सैं.मी. आकार के प्रति थैला 4-6 छेद कर दें। बीजित बैगों को एक अंधेरे कमरे में रख दें तथा लगभग 15-20 दिन तक 25-30 डिग्री सैल्सियस तापमान तथा 80-90 प्रतिशत नमी बनाए रखें। पूरा स्पान फैलने के बाद बैग को ऊपर से खोल दें तथा इसके ऊपर केसिंग मिश्रण की तह बिछा दें।

मशरूम बीज/स्पान : खुम्बी के बीज को स्पान कहते हैं। स्पान डालने के दो-तीन दिन बाद तूड़ी या पुआल में सफेद धागे दिखाई देने लगते हैं जो 15-20 दिन में तूड़ी या पुआल में पूर्ण रूप में फैलकर तूड़ी या पुआल को सफेद बना देते हैं। बीज की सुगमता से उपलब्धता उत्पादन का एक अहम पहलू है। अच्छी किस्म का बीज एकदम सफेद, तन्तुमय संरचना एवं सम्पूर्ण दाने मशरूम के कवक जाल से ढके होने चाहिएं। मशरूम का बीज 18-20 दिन से अधिक पुराना नहीं होना चाहिए। जहां तक सम्भव हो हमेशा ताजा बीज प्रयोग करना चाहिए।

माध्यम में बीज का मिलाना : सर्वप्रथम उपयुक्त आकार की थैली में भूसे की एक परत बिछाते हैं इसके पश्चात् ऊपर मशरूम बीज की एक परत बिछाते हैं। इस तरह बीज की तीन परत एवं भूसे की चार परत बिछाते हैं। अंतिम परत भूसे की होती है तथा इसके पश्चात् थैली का मुहँ सूतली से बांधकर इसे उत्पादन कक्ष में रखा जाता है।

उत्पादन कक्ष का तापमान : बीज मिश्रित थैलियों को उत्पादन कक्ष में रखना चाहिए जहां उपयुक्त वातावरण हो। इस कक्ष में संभवत: तापमान 25-35 डिग्री सैल्सियस होना चाहिए एवं अपेक्षित नमी 80 प्रतिशत के लगभग होनी चाहिए। सूर्य का सीधा प्रकाश उत्पादन कक्ष में नहीं आना चाहिए एवं उत्पादन कक्ष में पर्याप्त रोशनदान होने चाहिएं। थैली के अन्दर का तापमान 2-4 डिग्री सैल्सियस अधिक होता है। अत: उत्पादन कक्ष में उपयुक्त वातावरण निर्मित होना आवश्यक है।

केसिंग : सफेद दूधिया मशरूम में भी सफेद बटन मशरूम की तरह केसिंग की आवश्यकता होती है। केसिंग के प्रयोग से ही मशरूम की बीजाणुधानी निकलती है। इससे पर्याप्त नमी भी मिलती है तथा बीजाणुधानी के निकलने में सहारा मिल जाता है। जब माध्यम में मशरूम फफूंद की वृद्धि पूर्ण हो जाए एवं थैली बाहर से एकदम सफेद दिखाई देने लगे तब केसिंग परत जो कि 3/4 भाग दोमट मिट्टी व 1/4 भाग बालू मिट्टी को मिलाते हैं तथा इससे कुल तैयार मिश्रण के वज़न का 10 प्रतिशत चाक पाऊडर मिलाया जाता है। इस मिश्रण को कीटाणु रहित करने के लिए 5 प्रतिशत फोर्मेलीन (1.25 लीटर फोर्मेलीन 40 प्रतिशत) को 10 लीटर पानी व 0.1 प्रतिशत बाविस्टीन (10 ग्राम बाविस्टीन, 10 लीटर पानी) के घोल से गीला करके पॉलीथीन शीट से ढक दें। केसिंग करने के 24 घंटे पहले केसिंग मिश्रण से पॉलीथीन शीट हटायें तथा मिश्रण को बेलचे से उलट पलट दें ताकि इसमें फोर्मेलीन की गंध न रहे। इस प्रकार तैयार केसिंग मिश्रण की 2-3 सैं.मी. मोटी परत बीज फैले हुए थैलों के मुंह को खोलकर बिछा देते हैं। केसिंग करने के तुरन्त बाद पानी का छिड़काव अवश्य कर देना चाहिए। केसिंग करने के 10-15 दिन पश्चात् मशरूम का कवकजाल केसिंग मिट्टी में फैल जाता है।

पिन हैड अवस्था : इसी कवकजाल से मशरूम का फलनकाय 5-6 दिन में छोटे-छोटे पिन के समान दिखाई देने लगता है जो 4-5 दिन में परिपक्व हो जाता है एवं एक सफेद छत्ते का रूप धारण कर लेता है। इसे सावधानीपूर्वक हल्का सा घुमाकर तोड़ लेते हैं। इस तरह तीन बार तुड़ाई की जा सकती है। तने के निचले भाग को जिसमें मिट्टी लगी रहती है नीचे से काट दिया जाता है और खुम्ब 200 ग्राम के पॉलीथीन या पी पी बैग में जिसमें 4-5 मिली मीटर के कम से कम 4-5 छेद हों पैक कर लिया जाता है। यह खुम्ब भी ढींगरी खुम्ब की तरह अच्छी पैदावार देती है। इसकी उत्पादकता 70-80 प्रतिशत के करीब होती है यानि एक किलोग्राम सूखे भूसे अथवा पुआल में 700-800 ग्राम ताज़ा खुम्ब प्राप्त होती है। पॉलीथीन की थैलियों को लकड़ी या एल्युमिनियम की रैक में 5-10 सैं.मी. की दूरी पर रखा जा सकता है एवं इस समय पर्याप्त रोशनदान व प्रकाश की व्यवस्था होनी चाहिए।

फसल प्रबन्धन : बिजाई के 15-20 दिन बाद कवकजाल पूर्ण रूप से फैल जाता है और आवरण बिछाने के 10-12 दिन बाद मशरूम की कलिकाएं उत्पन्न होने लगती हैं और 7-8 दिन वृद्धि के उपरान्त तुड़ाई योग्य हो जाती हैं। इसलिए केसिंग करने के तुरन्त बाद पानी का छिड़काव प्रारम्भ कर देना चाहिए और तब तक फसल उगती रहती है। आवरण मृदा को सदैव नम बनाए रखना चाहिए। अच्छी मशरूम उत्पादन हेतु कमरे की वायु की आपेक्षित आर्द्रता 80 प्रतिशत से अधिक एवं तापमान 28-34 डिग्री सैल्सियस अंश के मध्य रहना चाहिए। नमी व तापमान के साथ-साथ गैसीय संतुलन बनाए रखने हेतु कमरे में सीमित वायु आगमन रखनी चाहिए। प्रकाश का उत्तम प्रबन्ध होना चाहिए। इस मशरूम की दोनों अवस्थाओं के लिए उपयुक्त वातावरण आवश्यक है। कवकजाल की उत्तम वृद्धि हेतु 20-37 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान व फलनकाय की अवस्था में 28-32 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान होना चाहिए। कमरे की आपेक्षित आर्द्रता 80-90 प्रतिशत के बीच होनी चाहिए। केसिंग मिट्टी को फोर्मेलीन (5 प्रतिशत) एवं बाविस्टीन (75 पी.पी.एम.) से निर्जर्मीकृत करके प्रयोग करना चाहिए। केंसिग मिट्टी का पी.एच. 6.5 से 7.0 के मध्य होना चाहिए एवं मृदा में सदैव नमी बनी रहनी चाहिए।

तुड़ाई : मशरूम के फलनकाय की सही अवस्था या इसकी परिपक्वता फलनकाय के आकार व लम्बाई से लगाई जा सकती है। फलनकाय की प्रारंभिक अवस्था में इसके किनारे मोटे होते हैं एवं मुड़े हुए नहीं होते लेकिन जब फलनकाय परिपक्व हो जाते हैं तब फलनकाय के किनारे पतले एवं अन्दर की ओर मुड़ने लगते हैं। जब फलनकाय की लम्बाई 10-15 सैं.मी. हो जाए एवं टोपी खुलना प्रारम्भ हो जाए तो इसे घुमाकर तोड़ लेना चाहिए। तोड़ने के पश्चात् इसका डंठल माध्यम में लगा नहीं होना चाहिए जहां तक संभव हो सभी फलनकाय को एक साथ तोड़ लेना चाहिए और फिर पानी दे देना चाहिए।

बीमारियां एवं नियन्त्रण : सफेद दूधिया मशरूम में बीमारियों का प्रकोप कम होता है। इस मशरूम का फफूंद (कवकजाल) जब माध्यम में फैलता है तब बहुत-से प्रतिस्पर्धात्मक फफूंद आक्रमण करते हैं जिससे मशरूम कवकजाल की वृद्धि प्रभावित होती है। इन प्रतिस्पर्धात्मक फफूंदों में प्रमुख

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सुबबुल : एक संभावित चारा वृक्ष

✍ **रविंद्र सिहँ ढिल्लों, छवि सिरोही एवं एस. के. ढांडा**
वानिकी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

पशुओं को अच्छा चारा खिलाना दूध की पैदावार की प्रमुख आवश्यकताओं में से एक है, लेकिन भारत को चारे की गंभीर कमी का सामना करना पड़ रहा है। एक मीडिया रिपोर्ट के अनुसार, भारत को सूखे चारे की उपलब्धता में 23.4 प्रतिशत, हरे चारे में 11.24 प्रतिशत और सांद्रता में 28.9 प्रतिशत की कमी का सामना करना पड़ रहा है।

सस्ते और अधिक दूध के लिए, हरा चारा खिलाना एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि फीड़ कॉन्संट्रेट महंगा होता है।

सुबबुल चारा के लिए सर्वोपयुक्त वृक्ष है। ल्यूसिना ल्यूकोसिफेला तेज़ी से बढ़ने वाला, सूखा प्रतिरोधी, उष्णकटिबंधीय लेग्युमिनस वृक्ष है। सुबबुल को आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, हरियाणा और उत्तर-प्रदेश आदि राज्यों में उगाया जाता है।

उपयुक्त जलवायु : सुबबुल विभिन्न जलवायु मृदा और प्रबंध परिस्थितियों में भी तापमान, 600-3000 मिलीमीटर औसत वार्षिक वर्षा चाहिए होती है। यह पाले के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। सुबबुल सामान्यत: तीन प्रकार के होते हैं हवाइन, सालवाडोर और पेरु जिसमें सल्वाडोर प्रकार के वृक्ष 20 मीटर तक ऊँचे और टहनी रहित तने के साथ अत्यधिक उपजाऊ होने के कारण ईंधन काष्ठ और उत्पादन के लिए उपयोगी है। हवाइन झाड़ी नुमा होता है और खरपतवार के रूप में तेज़ी से फैलता है और कम पसंद किया जाता है। सुबबुल की प्रमुख किस्में के. 8 (मेक्सिको), के. 28, के. 67, के. 72, के. 636, एक के. 24 और एस. के. 22 है। के. 67 किस्म उत्तम क्वालिटी और अत्यधिक बड़ी मात्रा में बीज पैदा करने वाली किस्म है।

नर्सरी तकनीक : सुबबुल के पौधे को बीज द्वारा तैयार किया जाता है। पकी हुई फलियों को बीज झड़ने से पहले ही एकत्रित करके धूप में 3 से 4 दिन तक सुखाया जाता है। उसके बाद फलियाँ दो भागों में बट जाती हैं और बीज को छलनी के द्वारा अलग कर दिया जाता है। सुबबुल का बीज 3 से 4 वर्षों तक जीवित रहता है और 1 किलो में लगभग 32,000 बीज होते हैं। इसके बीजों को बुवाई से पहलो 10 मिनट तक गर्म पानी में भिगोने से इनके बीजों में 80 प्रतिशत तक अंकुरण प्राप्त हो जाता है।

चारा और ईंधन की प्राप्ति : छोटे व मध्यम किसान ब्लॉक रोपण के अंतर्गत 50 x 3 मीटर या 100 x 2 मीटर क्षेत्र में खेत के किनारे या चारों तरफ 50 x 50 सैं.मी. या 50 x 100 सैं.मी. की दूरी पर सुबबुल के 200 से 400 वृक्षों का समावेश करके दूसरे वर्ष से ही ईंधन, बाड़ सामग्री और चारा प्राप्त कर सकते हैं। आवश्यकतानुसार दूसरे, तीसरे या चौथे वर्ष से कटाई की जा सकती है। काटने के एक सप्ताह बाद कल्ले निकलना प्रारंभ हो जाती हैं और चारा के लिए इन्हें पुन: काटा जा सकता है और इस तरह लगभग 60 दिन के अन्तराल में वर्ष भर हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। कल्लों की संख्या 8-10 तक सीमित करके एक वर्ष बाद काटने से बाड़ सामग्री, जलाऊ ईंधन के साथ ही चारे की भी प्राप्ति होती है। सुबबुल के पौधों को चारा पत्ती की वजह से वन चारागाह पद्धति में भी लगाया जा सकता है।

सुबबुल की पत्तियां पशुओं के लिए बहुत ही पोषक तत्व वाली होती हैं। सुबबुल के चारे को हरे रूप में सुखाकर साइलेज के रूप में पशुओं को खिलाया जा सकता है। सूखी सुबबुल की पत्तियों को लहसुन, बरसीम, जई, आदि के साथ मिलाकर जानवरों को खिलाने से पौष्टिकता के साथ-साथ सुरक्षा भी मिलती है। सुबबुल से बहुत अधिक मात्रा में जलाऊ लकड़ी पैदा की जा सकती है। इसकी लकड़ी का कैलोरीफिक मान 3900 किलो कैलोरी प्रति किलोग्राम से लेकर 4640 किलो कैलोरी प्रति किलोग्राम तक होता है।

काष्ठ और लुग्दी उद्योग में उपयोग : सुबबुल का उपयोग हल्की भूमि में कृषि-वानिकी के अंतर्गत काष्ठ और लुग्दी उत्पादन के लिए किया जाता है। ईंधन के लिए कतार से कतार की और पौधे से पौधे की दूरी 11 मीटर रखी जाती है और लुग्दी उत्पादन के लिए 3 x 1.5 मीटर रखी जाती है। किसान अपने खेतों में 1.25 x 1.25 मीटर भी लगाते हैं।

मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए सुबबुल : सुबबुल मिट्टी को समृद्ध करने और पड़ोसी पौधों की सहायता करता है। इसकी पत्तियाँ छोटी और मुलायम होने से मृदा में बहुत जल्दी सड़ जाती हैं और खाद बनाती हैं। इससे तीव्र गति से फसलों को पोषक तत्व मिल जाते हैं। अच्छी मिट्टी और नमी की स्थिति में, एक हैक्टेयर सुबबुल की झाड़ियों को काट दिया जाता है और मिट्टी में मिलाया जाता है, जो प्रति वर्ष 500 किलोग्राम नाइट्रोजन तक जोड़ सकता है और इस प्रकार जैव उर्वरक का एक अच्छा स्रोत है। इसकी पत्तियों में नाइट्रोजन की मात्रा अधिक होती है जो अन्य फसलों के लिए खाद का काम करती है।

उपज : सुबबुल लुग्दी उद्योग के लिए 4 वर्ष की आयु होने पर काटने लायक हो जाते हैं। सुबबुल लकड़ी का औसत उत्पादन 70-75 टन प्रति हैक्टेयर होता है। यह वृक्ष सामान्यतया कॉपिसिंग प्रकृति का होता है जिसको हर 3 साल के अंतराल पर 40 वर्षों तक काटा जा सकता है। अच्छी उर्वरक मृदा में कटाई का अंतराल 6 से 8 सप्ताह हो सकता है और कम उर्वरक मृदा में यह अंतराल 12 सप्ताह तक हो सकता है। *

(पृष्ठ 6 का शेष)

हैं: ट्राइकोडरमा, राइजोपस, स्केलोरोशियम, एपजीलिस की प्रजातियां जो मशरूम कवकजाल से प्रतिस्पर्धा करती हैं एवं माध्यम में उपलब्ध पोषक तत्वों को ग्रहण कर लेते हैं जिससे फफूंद का फैलाव नहीं हो पाता एवं माध्यम खराब हो जाता है। इस मशरूम की पिन हैड़ अवस्था में पिन के ऊपर नीले रंग का फफूंद आक्रमण करता है जिसे ट्राइकोडरमा कहते हैं। इससे पिन छोटे रह जाते हैं व इनकी वृद्धि रुक जाती है। अत: अधिक तापमान पर उगने वाले खरपतवार मशरूम जैसे कोपराइनस प्रजातियां इस तापमान पर अधिक आक्रमण करते हैं। इस मशरूम को हाथ से तोड़कर आसानी से निकाला जा सकता है तथा कमरे में आद्रता 90 प्रतिशत से कम करने पर इस खरपतवार से बचा जा सकता है। दूसरी प्रतिस्पर्धात्मक फफूंद से बचने के लिए भूसा व पानी अच्छी गुणवत्ता का प्रयोग करना चाहिए। मशरूम कक्ष में आवागमन कम करें व अन्दर घुसते समय फार्मेलिन का प्रयोग करें।

इसमें पिन हैड अवस्था में बटन पीले पड़ कर मरने लगते हैं। इस रोग से बचने के लिए सर्वमित गुच्छे को मशरूम थैली से निकाल दें एवं क्लोरीन पानी को सिंचाई करने वाले पानी के साथ मिलाकर प्रयोग करें। अधिक नमी व रोशनी रोग संक्रमण को कम करने में मदद करते हैं। *

सल्फरः फसलों का एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व

✍ **मनजीत, पारस कम्बोज एवं एस. के. ठकराल**
सस्य विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि संबंधी क्रियाओं, उच्च बायोमास निर्यात और वातावरण में सल्फर उत्सर्जन को कम करने के परिणामस्वरूप दुनिया के कई क्षेत्रों में मिट्टी में सल्फर की कमी आम होती जा रही है।

सल्फर पौधों के 17 आवश्यक पोषक तत्वों में से एक है। यह सभी फसलों की वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक है। अधिकांश पौधों द्वारा सल्फर की आवश्यकता सल्फेट (SO_4^{2-}) के रूप में जड़ों के माध्यम से अवशोषित होती है। किसी भी आवश्यक पोषक तत्व की तरह, सल्फर के भी पौधे में कुछ विशिष्ट कार्य होते हैं। इस प्रकार, सल्फर की कमी को केवल सल्फर उर्वरक के डालने से ही ठीक किया जा सकता है।

हाल के वर्षों में, सल्फर की कमी अधिक हो गई है और फसल उत्पादन में सल्फर का महत्व और अधिक महत्वपूर्ण होता जा रहा है। अब इसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटेशियम के साथ-साथ 'चौथे मैक्रोन्यूट्रिएंट' के रूप में पहचाना जाने लगा है। तिलहनी, दलहनी, चारा और कुछ सब्जियों की फसलों को काफी मात्रा में सल्फर की आवश्यकता होती है। कई फसलों में, पौधे में इसकी मात्रा फास्फोरस के समान होती है।

पौधों में सल्फर का महत्व :

- सल्फर कुछ अमीनो एसिड में पाया जाता है, जो प्रोटीन के निर्माण खंड हैं। लगभग 90% पौधों द्वारा अवशोषित सल्फर का उपयोग प्रोटीन के संश्लेषण के लिए किया जाता है।
- क्लोरोफिल के निर्माण के लिए सल्फर की आवश्यक होती है। तिलहनी फसलों में, तेलों के संश्लेषण में आवश्यक होती है।
- नाइट्रोजन के मेटाबोलिज़्म में सक्रिय भूमिका निभाता है।
- लिगनिन एवं पेक्टिन के निर्माण में सहायक।

ज़मीन में सल्फर की कमी : कम कार्बनिक पदार्थ और उच्च वर्षा की स्थिति के साथ रेतीली मिट्टी में सल्फर की कमी की संभावना अधिक होती है। हालांकि, यहां तक कि उच्च कार्बनिक पदार्थ मिट्टी में भी, अक्सर, कार्बनिक पदार्थ के टूटने और खनिजकरण की प्रक्रिया तेज़ी से फसल की सल्फर की आवश्यकता को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं है। ऐसा होने पर, सल्फर युक्त उर्वरकों या संशोधनों को लागू करना पड़ता है।

सल्फर की कमी से तिलहनी फसलों की गुणवता व पैदावार में 40 प्रतिशत तक की कमी पाई गयी है। सल्फर धरती की सतह पर पाया जाने वाला 13 वां मुख्य तत्व है जिसकी औसत एकाग्रता 0.06 प्रतिशत है। तिलहनी फसलें लगभग 10 -25 किलोग्राम सल्फर व दलहनी फसलें 5-10 किलोग्राम सल्फर प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष भूमि में से ग्रहण कर लेती है। भारत में 41 प्रतिशत से अधिक ज़मीनों में सल्फर की कमी है। पौधों के अच्छे विकास के लिए N:S अनुपात 20:1 होना चाहिए। सल्फर की कमी से पौधों में 'अमाइड्रस' बन जाते हैं व N : S अनुपात बदल जाता है। जिसके हल के लिए हमें सल्फर के स्रोत की आवश्यकता होती है।

तिलहनी फसलों में सल्फर की कमी के लक्षण : सल्फर की कमी से पत्ते पीले रंग के हो जाते हैं। इसकी कमी के लक्षण पौधों में नाइट्रोजन की कमी के समान ही होते हैं परन्तु जहाँ नाइट्रोजन की कमी के लक्षण पहले पुराने पत्तों पर दिखाई देते हैं वहीं सल्फर की कमी के लक्षण पहले नए पत्तों पर आते हैं, क्योंकि नाइट्रोजन की तुलना में ये तत्व पौधों में स्थिर होता है जिससे कि प्रोटीन व क्लोरोफिल की कमी के चलते नए पत्ते पीले व छोटे रह जाते हैं। सल्फर की कमी से पौधों में कोशिका विभाजन भी प्रभावित होता है। सल्फर की कमी से क्रूसीफेरी कुल के पौधे अधिक संवेदनशील होते हैं। इनमें पत्तियों का निचला हिस्सा लाल व लाल-भूरे रंग में बदल जाता है तथा भयंकर कमी की दशा में पत्तियाँ ऊपर तथा नीचे से बैंगनी रंग की हो जाती हैं व नीचे की ओर मुड़ जाती हैं। सल्फर की कमी वाले पौधे छोटे होते हैं और उनकी वृद्धि भी कम होती है।

सल्फर का अन्य पोषक तत्वों के साथ मिश्रण : विभिन्न शोध कार्यों के आधार पर यह पाया गया कि नाइट्रोजन व सल्फर के मिश्रण को अगर सरसों में डाला जाए तो इससे सकारात्मक परिणाम मिलते हैं। वहीं सल्फर व फॉस्फोरस के मिश्रण का निम्न स्तर पर प्रयोग किया जाए तो इससे सूरजमुखी व सरसों में भी सकारात्मक परिणाम मिले हैं। यदि फॉस्फोरस की मात्रा बढ़ा दी जाये तो परिणाम अच्छे नहीं मिलते। पोटाश व सल्फर को भी अगर एक खेत में डाला जाये तो इससे भी सकारात्मक परिणाम मिलते हैं। मोलिबिडनम व सल्फर को एक साथ खेत में डालने से नकारात्मक परिणाम मिले।

यदि लोहे व सल्फर के मिश्रण का प्रयोग करें तो इससे पौधे का विकास अच्छा होता है। वही सेलेनियम व सल्फर के एक साथ प्रयोग करने से नकारात्मक परिणाम मिले।

विभिन्न फसल प्रणाली में सल्फर का महत्व : विभिन्न फसल प्रणाली जैसे- मक्का-मूँगफली में 30 कि.ग्रा./है. सल्फर का अनुप्रयोग लाभदायक पाया गया है। धान-सूरजमुखी फसल चक्र में सल्फर यदि 30-30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर दोनों फसलों में डाला जाए तो अनुप्रयोग की बहुत अच्छी अनुक्रिया पाई गई है। इसी प्रकार मूँगफली-सरसों फसल-चक्र में 45 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हैक्टेयर डालने से दोनों फसलों के उत्पादन में महत्वपूर्ण वृद्धि देखी गई है। सल्फर की माँग अपेक्षाकृत तिलहन-तिलहन फसल-चक्र में अधिक रहती है।

सल्फर के स्वदेशी स्रोतः

जिप्समः जिप्सम का इस्तेमाल कई सालों से किया जा रहा है। इसमें पर्याप्त मात्रा में कैल्शियम व सल्फर होता है। जिप्सम, सल्फर का कम लागत का कुशल स्रोत है। ये मुख्यतौर पर खानों में से निकाला जाता है, भारत में सल्फर का लगभग 1004 मिलियन टन भंडार है, जिसमें से 90 प्रतिशत राजस्थान के जोधपुर, नागौर और बीकानेर ज़िलों में पाया जाता है। राजस्थान स्टेट माइन्स एंड मिनरल लिमिटेड और भारतीय खाद्य निगम जिप्सम के मुख्य निर्माता हैं। आज-कल जिप्सम से बायो-उत्पाद भी प्रयोग में लाये जा रहे हैं जैसे कि - फोसफो-जिप्सम

पाइराइट्स (FeS_2): पाइराइट्स में मुख्यतः लोहा व सल्फर पाए जाते हैं। ये बिहार, राजस्थान व कर्नाटक के कुछ क्षेत्रों में पाया जाता है। 'हाई ग्रेड' पाइराइट का प्रयोग औद्योगिक उद्देश्य के लिए किया जाता है जबकि 'लो ग्रेड' पाइराइट का प्रयोग सल्फर के स्रोत के रूप में भूमि की उपजाऊ शक्ति बढ़ाने के लिए किया जाता है। अन्य उर्वरक स्रोत सारणी 1 में बताये गए हैं।

सारणी 1: विभिन्न उर्वरकों में पोषक तत्वों की मात्रा

उर्वरक	पोषक तत्व की मात्रा (प्रतिशत)			
	सल्फर	नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पोटाश
अमोनियम फॉस्फेट सल्फेट	13	16	20	–
कैल्शियम सल्फेट (जिप्सम)	13–18	–	–	–
अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट	26	15	–	–
अमोनियम सल्फेट	24	20.6	–	–
आयरन पाइराइट	22–24	–	–	–
ज़िंक सल्फेट	17	–	–	–
पोटेशियम मैग्नीशियम सल्फेट	16–22	–	–	22
फॉस्फोजिप्सम	11	–	2–3	–
तात्वीय गंधक	85–100	–	–	–
सिंगल सुपर फॉस्फेट	11	–	18.2	–
पोटेशियम सल्फेट	17.5	–	–	50
मैग्नीशियम सल्फेट	13	–	–	–
कॉपर सल्फेट	11.4	–	–	–
फैरस सल्फेट	18.8	–	–	–
मैंग्नीज़ सल्फेट	21.2	–	–	–

सारणी 2: मृदाओं से सल्फर का दोहन

फसल	मि.ग्रा./कि.ग्रा.	फसल	मि.ग्रा./कि.ग्रा.
राई /सरसों	17.3	चना	8.7
तिल	16.6	मूंगफली	7.9
कुसुम	12.6	अरहर	7.5
मूँग	12.0	उर्द	5.6
सूरजमुखी	11.7	धान	3.0

सारणी 3: सल्फर के प्रयोग से तेल की मात्रा में बढ़ोत्तरी

फसल	तेल की मात्रा में बढ़ोत्तरी (प्रतिशत)	फसल	तेल की मात्रा में बढ़ोत्तरी (प्रतिशत)
सरसों	8.5	मूँगफली	5.1
सोयाबीन	6.8	सूरजमुखी	3.8

सल्फर का जैविक खाद के साथ समन्वित उपयोग : जैविक खाद का उपयोग करने से सल्फर की अनुप्रयोग क्षमता बढ़ती है तथा अवशिष्ट मात्रा भी मृदाओं में बढ़ती है। 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर सल्फर को 5 टन जैविक खाद के साथ उपयोग करने से मूँगफली की उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है साथ ही अगले मौसम में बोई जाने वाली फसल को भी लाभ पहुँचता है। इसी प्रकार पाइराइट को 10 टन प्रति हैक्टेयर की दर से जैविक खाद के साथ उपयोग करने पर मूँगफली की उत्पादकता को पाइराइट के एकाकी उपयोग की अपेक्षा कई गुना बढ़ाया जा सकता है। बुवाई से पहले मृदा जाँच के आधार पर सल्फर की उपयुक्त मात्रा मृदा में पता कर लेनी चाहिए। उसी आधार पर फसल की जाति, फसल प्रणाली तथा मृदा के प्रकार के अनुसार सल्फर की उपयुक्त मात्रा बुवाई करते समय खूड़ में डालने से अच्छा उत्पादन प्राप्त होता है। लेकिन मूँगफली का अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए सल्फर को बुवाई के समय के अतिरिक्त फल-जड़ निकलते समय या जब छोटी-छोटी फलियाँ बन रही हों तब मृदा की सतह पर सल्फर बिखेर कर डालने पर सबसे अधिक लाभ मिलता है। सल्फर का फसल में अधिक प्रभाव लाने के लिए सल्फर घोलक जीवाणुओं जैसे-थायोबैसिलस, थायोऑक्सीडेन्टस, जैन्थोबैक्टर, स्यूडोमोनास, पैराकोकस एवं थायोमाइक्रोस्पोरा का प्रयोग करना लाभकारी पाया गया है। *

जल बचाने के लिए कुछ सुझाव

राम नरेश एवं संजय कुमार
मृदा एवं जल अभियन्त्रिकी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

1. खेतों में जल प्रवाह के लिए प्रयोग किए जा रहे कच्चे खालों एवं नालियों में लगभग 20-25 प्रतिशत पानी का अन्त: स्रवण द्वारा नुकसान हो जाता है। अत: खालों एवं नालियों का उचित रखरखाव अत्यन्त आवश्यक है।
2. एक खेत से दूसरे खेत की सिंचाई करने की प्रक्रिया (खासकर धान की फसल में प्रयुक्त) न अपनाएं। पानी के अपव्यय को कम करने के लिए खेत को अलग-अलग क्यारियों में बांटकर नालियों/खालों से सीधे अलग-अलग क्यारी में पानी दें।
3. वाष्पीकरण के नुकसान से बचाव हेतु, सिंचाई जहाँ तक सम्भव हो सांयकाल अथवा रात्रि के समय करनी चाहिए (विशेषकर भूजल दोहन वाले क्षेत्रों तथा गर्मी के मौसम में)।
4. खेतों को खरपतवार से मुक्त रखें क्योंकि खरपतवार खेत में उपलब्ध पानी व अन्य आवश्यक तत्वों का व्यर्थ में ही प्रयोग करते हैं।
5. सब्जी, फलों एवं अधिक दूरी वाली फसलों में आधुनिक एवं उच्च दक्षता वाले सिंचाई साधन जैसे टपका सिंचाई एवं फव्वारा सिंचाई का ही प्रयोग करना चाहिए।
6. खाद की दक्षता बढाने के लिये टपका एवं फव्वारा के साथ फर्टिगेशन के प्रयोग करें। फर्टिगेशन के द्वारा पोषक तत्वों को जल उत्सर्जक के ठीक नीचे वाले भाग में प्रयोग किया जाता है जहाँ पर जड़ों की क्रियाविधि केन्द्रित रहती है।
7. सतही सिंचाई विधि का प्रयोग करते समय, गहरे अन्त: स्रवण नुकसान (Deep percolation losses) से बचाव के लिए, खेतों को मृदा के अनुसार छोटे-छोटे भागों में बांटकर सिंचाई करनी चाहिए।
8. सतही सिंचाई विधि का प्रयोग करने से पूर्व खेतों को लेज़र लेवलर (Laser Leveller) द्वारा समतल कर लेना चाहिए ताकि उच्च सिंचाई जल दक्षता प्राप्त हो सके।
9. जहां तक सम्भव हो, कम पानी की आवश्यकता वाली एवं अधिक लाभ देने वाली फसलों का उत्पादन करना चाहिए।
10. फसलों को अनावश्यक पानी नहीं देना चाहिए एवं आवश्यकता के समय ही सिंचाई करनी चाहिए।
11. वर्षा के जल एवं अतिरिक्त उपलब्ध जल के भंडारण हेतु गांवों के जलाशय एवं तालाबों का सुधारीकरण एवं उचित रखरखाव करना चाहिए। (शेष पृष्ठ 12 पर)

जड़ गाँठ सूत्रकृमि : ट्राइकोडर्मा से जैविक नियंत्रण

✍ **दीपक कुमार, हरजोत सिंह सिद्धू एवं विनोद कुमार**
सूत्रकृमि विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

सूत्रकृमि (निमेटोड) सूक्ष्म, कृमि के समान जीव है जो पतले धागे के समान होते हैं। इन्हें इनके सूक्ष्म आकार, अर्ध पारदर्शी शरीर के कारण सामान्य नग्न आँखों से खेतों में नहीं देखा जा सकता इन्हें सूक्ष्मदर्शी से आसानी से देखा जा सकता है। इन सूत्रकृमियों के मुख्य भाग में सुई के समान एक संरचना होती है जिसे स्टाइलेट कहते हैं, जिसके द्वारा ये जड़ों में संक्रमण करके उसके कोशिकाओं व उत्तकों से पोषण लेते हैं। सूत्रकृमि विभिन्न प्रकार की फसलों में रोग उत्पन्न करता है, जिसकी पहचान आम किसान नहीं कर पाते एवं अन्य रोगनाशक रसायनों का छिडकाव कर रोकथाम करने का प्रयास करते हैं, जिससे उनका श्रम, पैसा व समय बर्बाद होता है एवं सफलता भी नहीं मिलती। अत: इन सूत्रकृमियों की पहचान करना आवश्यक है एवं इनसे होने वाले रोगों की पहचान कर इन्हें विभिन्न विधियों द्वारा नियंत्रण किया जाना चाहिये। जिनमें से जैविक नियंत्रण एक अच्छा विकल्प है।

जैविक नियंत्रण : फसलों के नाशकजीवों को नियन्त्रित करने के लिए दूसरे जीवों (प्राकृतिक शत्रुओं) को प्रयोग में लाना जैव नियन्त्रण कहलाता है। जैव नियन्त्रण, एकीकृत नाशकजीव प्रबंधन का महत्वपूर्ण अंग है। इस विधि में नाशकजीवी व उसके प्राकृतिक शत्रुओं के जीवनचक्र, भोजन, मानव सहित अन्य जीवों पर प्रभाव आदि का गहन अध्ययन करके प्रबन्धन का निर्णय लिया जाता है। यह जीव हानिकारक सूत्रकृमि को नष्ट करते रहते हैं और उनकी संख्या को आर्थिक हानि स्तर से नीचे रखने में हमारी सहायता करते हैं।

जैविक नियंत्रण में ट्राइकोडर्मा का महत्व : ट्राइकोडर्मा एक जैव-कवकनाशक है जो विभिन्न प्रकार की कवकजनित बीमारियों को रोकने में मदद करता है। इससे रासायनिक कवकनाशक के ऊपर निर्भरता कम हो जाती है। इसका प्रयोग प्राकृतिक रूप से सुरक्षित माना जाता है क्योंकि इसके उपयोग का प्रकृति में कोई दुष्प्रभाव देखने को नहीं मिलता है। इसकी दो प्रजातियाँ विशेष रूप से प्रचलित हैं-ट्राइकोडर्मा विरिडी एवं ट्राइकोडर्मा हर्जियानम। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं कृषि की दृष्टि से उपयोगी है।

ट्राइकोडर्मा मुख्यत: एक जैव कवकनाशक के अलावा सूत्रकृमि से होने वाले रोगों से भी पौधों की रक्षा करते हैं। यह मुख्यत: दो प्रकार से रोगकारकों की वृद्धि को रोकता है। प्रथम, यह विशेष प्रकार के प्रतिजैविक रसायनों का संश्लेषण एवं उत्सर्जन करता है, जो रोगकारक जीवों के लिये विष का काम करते हैं। दूसरा, यह प्रकृति में रोगकारकों पर सीधा आक्रमण कर उसे अपना भोजन बना लेता है या उन्हें अपने विशेष एन्जाइम जैसे काइटिनेज, β-1,3, ग्लूकानेज द्वारा तोड़ देता है। इस प्रकार रोगकारक जीवों की संख्या तथा उनसे होने वाले दुष्प्रभाव को कम करके पौधों की रक्षा करता है। यह पौधों में उपस्थित रोगरोधी जीन्स को सक्रिय कर पौधों की रोगकारकों से लड़ने की आन्तरिक क्षमता का भी विकास करता है।

ट्राइकोडर्मा के प्रयोग से लाभ :

- यह सूत्रकृमि की वृद्धि को रोकता है या उन्हें मारकर पौधों को रोग मुक्त करता है। यह पौधों की रासायनिक प्रक्रियाओं को परिवर्तित कर पौधों में रोगरोधी क्षमता को बढ़ाता है।
- यह पौधों में सूत्रकृमि के विरुद्ध तंत्रगत अधिग्रहित प्रतिरोधक क्षमता की क्रियाविधि को सक्रिय करता है।
- यह मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों के अपघटन की दर बढ़ाता है अत: यह जैव उर्वरक की तरह काम करता है।
- यह पौधों की वृद्धि को बढ़ाता है क्योंकि यह फास्फेट एवं अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों को घुलनशील बनाता है।
- ये कीटनाशकों, वनस्पतिनाशकों से दूषित मिट्टी के जैविक उपचार (बायोरिमेडिएशन) में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

ट्राइकोडर्मा के प्रयोग में सावधानियाँ :

- ट्राइकोडर्मा कल्चर फार्मूलेशन को उचित एवं प्रमाणित संस्था अथवा कम्पनी से ही खरीदें।
- बीज-पौधे उपचार का कार्य छायादार एवं शुष्क स्थान पर करें।
- ट्राइकोडर्मा के साथ-साथ अन्य रसायनों का प्रयोग न करें।
- ट्राइकोडर्मा के प्रयोग के 4-5 दिनों के पश्चात् तक रसायनों का प्रयोग न करें।
- ट्राइकोडर्मा उपचारित बीज को सूर्य की सीधी धूप न लगने दें।
- कार्बनिक खाद में मिलाने के बाद इसे लम्बी अवधि के लिये न रखें।

ट्राइकोडर्मा के प्रयोग की विधि

- बीजोपचार के लिये उचित मात्रा में ट्राइकोडर्मा पाऊडर (फार्मूलेशन) को बीज में मिश्रित कर छाया में सुखा लें फिर बुवाई करें।
- मृदा शोधन एक किलोग्राम ट्राइकोडर्मा पाऊडर को 25 किलोग्राम कम्पोस्ट (गोबर की सड़ी खाद) में मिलाकर एक सप्ताह तक छायादार स्थान पर रखकर उसे गीले बोरे से ढकें ताकि इसके बीजाणु अंकुरित हो जाएँ। इस कम्पोस्ट को एक एकड़ खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दें फिर बुवाई व रोपाई करें।
- नर्सरी उपचार बुवाई से पहले उचित मात्रा ट्राइकोडर्मा उत्पाद प्रति लीटर पानी में घोलकर नर्सरी बेड को भिगोएँ।

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के सूत्रकृमि विज्ञान विभाग द्वारा दी गई कुछ सिफारिशें

- ट्राइकोडर्मा के मिट्टी अनुप्रयोग के माध्यम से भिंडी में बुवाई के समय 2.5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
- संरक्षित खेती के तहत, टमाटर में ट्राइकोडर्मा का मिट्टी अनुप्रयोग 20 ग्राम प्रति मीटर वर्ग, नीम केक व फार्म यार्ड खाद व वर्मीकम्पोस्ट 100 ग्राम प्रति मीटर वर्ग के साथ मिला कर किया जाता है। *

गर्मी से मधुमक्खियों का बचाव कैसे करें

✍ **भूपेन्द्र सिंह, नरेंद्र कुमार[1] एवं दीलिप कुमार[2]**
सायना नेहवाल कृषि प्रौ. प्र. एवं शिक्षण संस्थान
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मधुमक्खी पालन में मधुमक्खी परिवारों का उनकी आवश्यकतानुसार उचित प्रबन्ध करना अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। विभिन्न मौसमों के अनुसार कालोनियों की देख-रेख करके शहद के साथ-साथ मधुमक्खी परिवारों को भी बढ़ाया जा सकता है। वैसे तो हर मौसम में ही मधुमक्खियों का पूरा ध्यान रखना पड़ता है परंतु हरियाणा प्रदेश में सबसे प्रतिकूल मौसम गर्मियों का होता है जब तापमान 48 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है। इस मौसम में मकरन्द व पराग दोनों की ही अत्यधिक कमी हो जाती है। इसलिए इस समय को 'डर्थ पीरियड' कहते हैं। गर्मी बढ़ने तथा भोजन की कमी के कारण मधुमक्खियां शिथिल हो जाती हैं तथा रानी द्वारा अण्डे देने की गति भी धीमी हो जाती है जिसके कारण मधुमक्खी कॉलोनियां लगातार कमज़ोर होती चली जाती हैं। गर्मी के मौसम में वायुमण्डल का तापमान बढ़ने के कारण मौनों का अधिक समय पानी लाने व मौनगृह का तापमान नियन्त्रित करने में ही लग जाता है जिसका शहद उत्पादन पर सीधा असर पड़ता है। इस मौसम में नीचे दी गई बातों पर ध्यान देकर मधुमक्खियों का उचित रखरखाव किया जा सकता है।

- अगर हो सके तो मधुमक्खियों को ऐसी जगह पर स्थानांतरित कर देना चाहिए जहां पर मधुमक्खियों के लिए भोजन पर्याप्त मात्रा में हो।
- मधुमक्खी कॉलोनियों को घने छायादार स्थान पर रखना चाहिए ताकि उन्हें धूप से बचाया जा सके।
- मौनवंशों को लू से बचाने के लिए मौनालय के चारों ओर घास फूस की टाटियों की बाड़ लगानी चाहिए।
- इस मौसम में मधुमक्खियों को पानी पीने तथा शहद को पतला करने के साथ-साथ मौनगृह के तापमान को नियन्त्रित करने के लिए भी बहुत आवश्यकता पड़ती है। इसलिए कॉलोनियों के नज़दीक पानी का उचित प्रबन्ध करना चाहिए।
- शिशुकक्ष में हवा के आवागमन की व्यवस्था करनी चाहिए। इसके लिए सुपर लगा सकते हैं।
- शहद निष्कासन के समय वंश की आवश्यकतानुसार कुछ शहद कॉलोनी में ही छोड़ देना चाहिए।
- जैसे कि इस मौसम में मकरंद व पराग वाले पौधे पुष्पविहीन हो जाते हैं इसलिए भोजन की कमी के कारण ब्रूड के पालन पोषण में कमी आ जाती है। कभी-कभी देखा गया है कि ब्रूड का पालन पोषण बन्द होने से मधुमक्खियां भाग जाती हैं। इसलिए ऐसे मधुमक्खी परिवारों को कृत्रिम भोजन देने की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए मधुमक्खियों को चीनी की चाशनी दी जाती है।
- चीनी की चाशनी बनाने के लिए 1 कि.ग्रा. चीनी को 1.5 लीटर पानी में उबालकर ठंडा कर लिया जाता है। चीनी की चाशनी कभी भी खुले बर्तन में नहीं देनी चाहिए वरना मौनालय में बीमारी फैलने और लूटमार होने का खतरा बना रहता है।
- इसके लिए पॉलीथिन के लिफाफों को उपयोग में लाया जाता है। चाशनी को पॉलीथिन के लिफाफों में डालकर ऊपर से गांठ या रबर बैंड लगाकर इन्हें बक्सों के बाहरी ढक्कन को हटा कर फ्रेमों (चौखटों) के ऊपर रख दिया जाता है। लिफाफे की ऊपरी सतह पर पिन या किसी नुकीली चीज़ से आठ-दस सुराख कर दिए जाते हैं जिनसे मधुमक्खियां चाशनी ले सकें।
- साधारण कालोनी को 400-500 मि.ली. चीनी की चाशनी एक सप्ताह के लिए पर्याप्त है।
- चीनी की चाशनी हमेशा सांयकाल में ही देनी चाहिए। दिन में चाशनी देने पर दूसरी कॉलोनी की मधुमक्खियां लूटमार करने की कोशिश करती हैं और इस प्रक्रिया में काफी कमेरी मधुमक्खियां मर जाती हैं।
- चाशनी सभी कालोनियों को एक साथ देनी चाहिए अन्यथा मौनालय के भीतर भी लूटमार हो सकती है।
- चाशनी बनाने में गुड़, शक्कर या शीरा का प्रयोग नहीं करना चाहिए अन्यथा मधुमक्खियों को दस्त लग सकते हैं।
- हरियाणा के दक्षिणी पश्चिमी भागों में, जहां मई जून के महीनों में तापमान काफी बढ़ जाता है, वहां बक्सों पर भीगी हुई बोरियां रखनी चाहिएं तथा बार-बार पानी छिड़ककर इन्हें गीला रखना चाहिए।
- कमज़ोर वंशों को आपस में या मज़बूत वशं के साथ मिला देना चाहिए ताकि मधुमक्ख्यां बक्से के अन्दर का तापमान आसानी से नियन्त्रित कर सकें।
- शत्रुओं जैसे मोमी पतंगा, अष्टपदी, चींटियों व बीमारियों से तुरन्त रक्षा करनी चाहिए।
- खाली फ्रेमों को इकट्ठा करके गन्धक का धूमन करना चाहिए ताकि छत्तों को मोमी पतंगे के प्रकोप से बचाया जा सके।
- कालोनियों का निरीक्षण 20-21 दिन के अन्तराल पर करते रहना चाहिए तथा आवश्यकतानुसार प्रबन्धन करना चाहिए। *

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, सदलपुर (हिसार)
[2]कृषि महाविद्यालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार

अनार के रोग व रोकथाम

✍ **राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण**
सूत्रकृमि विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अनार एक स्वादिष्ट फल होने के साथ कई प्रकार की दवाइयाँ, मसालों व रंगाई के काम में भी लाया जाता है। हरियाणा में उचित मिट्टी और जलवायु के कारण अनार की पैदावार ली जा सकती है। परन्तु इसमें फलों को गलाने वाले कई तरह के रोग लग जाते हैं। हरियाणा में अनार के जो रोग अधिक लगते हैं उनका विवरण निम्नलिखित है :

(1) बैक्टीरियल लीफ स्पॉट : पत्तियों पर छोटे-2 गहरे भूरे या काले तथा जलासिक्त धब्बे बनते हैं। जो बाद में आपस में मिलकर काफी बड़े दिखाई देते हैं। अधिक प्रकोप से पतियाँ गिर जाती हैं। ये धब्बे फूल व फलों के ऊपर भी बनते हैं। इससे फल पकने व खाने योग्य नहीं रहते। जुलाई-अगस्त में शुरू होकर यह रोग बरसात में अधिक फैलता है।

रोकथाम : रोकथाम के लिए रोग शुरू होते ही ब्लाइटॉक्स के घोल 0.1 प्रतिशत एस्ट्रैप्टोसाईक्लीन 200 पी.पी.एम. (2 ग्राम 10 लि. पानी में) के घोल का छिड़काव 10-15 दिन के अन्तराल पर दो बार करें।

(2) आल्टरनेरिया लीफ स्पॉट : पत्तियों पर छोटे-छोटे व गोल आकार के हल्के भूरे या गहरे भूरे धब्बे बन जाते हैं। कभी-कभी इन धब्बों पर भूरे रंग के गोल छल्ले दिखाई देते हैं। बाद में पत्तियां झुलस कर गिर जाती हैं। यह पत्तियां दोनों सतह पर भी देखी जा सकती हैं।

रोकथाम : मैन्कोज़ेब (डाईथेन एम-45) के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर करें।

(3) कोलटोट्राइकम लीफ स्पॉट : पत्तियों के ऊपर गहरे भूरे रंग के अनिश्चित आकार के धब्बे बनते हैं। रोग के लक्षण पत्तियों की नोक वाले भाग से प्रारम्भ होते हैं व डण्डल वाले सिरे की तरफ बढ़ते हैं। अधिक रोग के प्रकोप से पत्तियां सूख जाती हैं।

रोकथाम: मैन्कोज़ेब या कॉपरऑक्सीक्लोराइड नामक दवा के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

(4) फलगलन (विगलन): फलों के ऊपर भूरे या गहरे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। कभी-कभी फल फट जाते हैं। धब्बों के ऊपर कई प्रकार के हरे, काले या सफेद फफूंद की वृद्धि होती है। रोगग्रस्त फलों में विगलन होने लगता है।

रोकथाम : उपर्युक्त लिखित आल्टरनेरिया बीमारी की दवा से उपचार करें। फल की तोड़ाई छिड़काव के 4-6 सप्ताह बाद करनी चाहिए। अगर फल फटते हों तो बौरोक्स के 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

(पृष्ठ 9 का शेष)

12. बारानी क्षेत्रों में खेतों को समतल एवं किनारों पर बंध बनाने चाहिएं ताकि वर्षा का जल खेतों में ही संरक्षित किया जा सके।
13. खारे भूजल क्षेत्रों में भूजल एवं सतही जल का मिश्रित प्रयोग वैज्ञानिक सिफारिशों के अनुसार करना चाहिए।
14. मिट्टी की सतह से, वाष्पीकरण द्वारा होने वाली नमी की अपव्ययता कम करने के लिए, ज़मीन की सतह को पौधों की पत्तियों अथवा प्लास्टिक द्वारा ढ़क कर रखना चाहिए।
15. खेत की नालियों का ढ़ाल खेत के अनुसार ठीक ढंग से हो ताकि जल के बहाव में रुकावट न आए और समय की बचत हो।
16. सिंचाई की नालियां कम चौड़ी व गहरी होनी चाहिएं तथा पक्की बना देनी चाहिएं।
17. खेतों की डोल को अधिक बड़ी नहीं बनाना चाहिए। खेत को छोटे-छोटे भागों में बांटना चाहिए ताकि एक तो जल का उचित प्रयोग हो सके और दूसरा कम से कम समय में अधिक से अधिक सिंचाई हो सके।
18. नालियों का रास्ता टेढ़ा-मेढ़ा न होकर सीधा होना चाहिए, ताकि जल के बहाव में अवरोध न आए और अधिक से अधिक जल कम से कम समय में लग सके। *

किसानों के लिए आवश्यक सूचना

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने 8 अगस्त, 2018 को SO.3951(ई) के तहत एक सूचना जारी की है कि 6 कीटनाशक (इनसेक्टिसाइड्स+फंजीसाइड्स+ हर्बीसाइड्स) का प्रयोग/ इस्तेमाल 31 दिसम्बर 2020 से बन्द कर दिया जाए।

31 दिसम्बर, 2020 से प्रतिबंधित होने वाले कीटनाशक

1. **एलाक्लोर** (Alachlor)
2. **डाइक्लोर्वास** (Dichlorvos)
3. **फोरेट** (Phorate)
4. **फास्फोमिडान** (Phosphamidon)
5. **ट्राइज़ोफॉस** (Triazophos)
6. **ट्राइक्लोर्फोन** (Trichlorfon)

नोट : किसी भी लेख में अगर इन कीटनाशकों के प्रयोग के बारे में लिखा है तो उसे रद्द माना जाए।

मई मास के कृषि कार्य

फसलों में

धान

भारी व स्वस्थ बीज के चुनाव के लिए 10 किलोग्राम बीज को 10 लीटर नमक के घोल (10 लीटर पानी में एक किलोग्राम नमक) में डुबोएं और हाथ से धीरे-धीरे चलाएं। हल्के रोगग्रस्त बीज तथा आभासी कंडुआ के पिण्ड ऊपर तैरने लगते हैं जिन्हें निकाल कर नष्ट कर दें और नीचे बैठे हुए भारी बीज को स्वच्छ पानी से 3-4 बार अच्छी तरह धो लें तथा तदुपरांत फफूंदनाशक दवा के घोल से उपचारित करें। बीजजनित रोगों से बचाव के लिए 10 लीटर फफूंदनाशक घोल (10 ग्राम कार्बेन्डाज़िम, एक ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन व 10 लीटर पानी) में 10-12 किलोग्राम बीज को 24 घंटे भिगोकर उपचारित करके ही बिजाई करें। धान की नर्सरी उगाने के लिए 10-12 गाड़ी गोबर की खाद, 22 कि.ग्रा. यूरिया, 65 कि.ग्रा. एस. एस. पी. तथा 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ डालें। फिर 2 सप्ताह बाद 22 कि. ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ नर्सरी में डालें।

धान की नर्सरी में खरपतवार नियन्त्रण के लिए बिजाई के 1-3 दिन बाद 600 ग्राम सोफिट (प्रेटिलाक्लोर 30 ई.सी.+सेफनर) प्रति एकड़ को 60 किग्रा. सूखी रेत में मिलाकर प्रयोग करें या 1.2 लीटर ब्यूटाक्लोर ई.सी. (मचैटी/डेलक्लोर/हिल्टाक्लोर) या थायोबेनकार्ब (सैटर्न ई.सी.) या पेन्डीमैथलीन (स्टॉम्प 30 ई.सी.) को 60 कि.ग्रा. सूखी रेत में मिलाकर अंकुरित धान के बोने के 6 दिन बाद एक एकड़ नर्सरी में डालें अथवा नर्सरी में मिले-जुले खरपतवारों के नियन्त्रण के लिए 100 मि.ली. बिस्पाइरी बैक सोडियम (नोमिनी गोल्ड) 10 एस.एल. को 200 लीटर पानी में मिलाकर बिजाई के 15 दिन बाद प्रति एकड़ छिड़काव करें।

कम अवधि वाली बौनी किस्में : आई आर 64, एच के आर 46, एच के आर 47 व गोबिन्द की नर्सरी 15 मई से 30 जून तक लगाएं।

तकनीकी सहायता :

- सुनील कुमार ढाण्डा, सह निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- सुरेन्द्र सिंह, सहायक निदेशक (बागवानी)
- राकेश कुमार, ज़िला विस्तार विशेषज्ञ (पादप रोग)
- तरुण वर्मा, ज़िला विस्तार विशेषज्ञ (कीट विज्ञान)
- डी. एस. दुहन, सहायक वैज्ञानिक (सब्जी विज्ञान)
- रोहतास कुमार, सहायक वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, सहायक वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह बिढान, सहायक प्राध्यापक (पशु उत्पादन प्रबन्धन)
- सूबे सिंह, सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

मध्यम अवधि वाली किस्में : जया, पी आर 106, एच के आर 120, एच के आर 126, एच के आर 127 एवं हरियाणा संकर धान-1 की नर्सरी 15 मई से 30 मई तक लगाएं।

गेहूं

खुली कांगियारी के निवारण के लिए गेहूं के बीज को सौर ताप से उपचारित करें। मई-जून के महीने में जिस दिन मौसम साफ व खुला हो उस दिन 8 बजे प्रात: बीज को पानी में भिगो दें; ऊपर तैरते हुए पदार्थों को निकाल कर नष्ट कर दें और 4 घण्टे तक भीगने के बाद नीचे बैठे गेहूं के बीज को दोपहर 12 बजे निकाल लें और किसी पक्के फर्श या तिरपाल आदि पर फैलाकर शाम तक सुखाएं।

कपास

बिजाई इस माह के अंत तक पूरी कर लें। नरमा की उन्नत किस्में तथा देसी कपास की सिफारिशशुदा किस्में ही बोएं।

कपास से बढिया फुटाव के लिए पूरे खेत की तैयारी सही ढंग से करनी ज़रूरी है। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए। इसके बाद आवश्यकतानुसार 3-4 जुताइयां करें। बिजाई के समय खेत में तर बत्तर (गीली आल) का होना ज़रूरी है। इसके लिए खेत में अच्छा पलेवा करें। गीले बत्तर में दो जुताइयां करके सुहागा लगाएं व खेत को एकसार कर लें। खेत में पौधों की सही संख्या के लिए बीज की सही मात्रा प्रयोग में लाएं व बीज का उपचार करके ही बिजाई करें। नरमे का रोयें रहित 6-8 किलोग्राम व रोएं-युक्त 8-10 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ प्रयोग करें। देसी कपास में 5 कि.ग्रा. बीज काफी रहता है। संकर किस्मों का रोएं उतरा बीज 1.2 से 1.5 कि.ग्रा. प्रति एकड़ प्रयोग करें। बी. टी. संकर किस्मों का 850 ग्राम बीज प्रति एकड़ प्रयोग करें। बीज को 4 से 5 सैं. मी. गहरा बोएं। नरमा की मुख्य किस्में एच एस 6, एच 1117 व एच 1226, एच 1098 संशोधित, एच 1236, एच 1300; नरमा की संकर किस्में एच एच एच 223, एच एच एच 287; देसी कपास की एच डी 107, एच डी 123, एच डी 324 व एच डी 432 तथा संकर नरमा में देसी की ए ए एच 1 प्रमुख हैं। बी.टी व संकर किस्मों को 67.5-60 सैं.मी. के फासले पर बीजें या कतार से कतार की दूरी 100 सैं.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 45 सैं.मी. रखें व अन्य किस्मों में कतार से कतार की दूरी 67.5 सैं.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 30 सैं.मी. रखें।

बीजने के लिए यदि रोएं उतारे हुए बीज न मिलें तो रोएंदार (साधारण) बीज को बोने से पहले बारीक मिट्टी, गोबर या राख से रगड़ लेना चाहिए ताकि ड्रिल में से बीज एकसार निकलें। बिजाई कपास बीजने वाली एक खूड वाली ड्रिल से कतारों में करें।

अमेरिकन कपास की बिजाई करते समय हिसार तथा सिरसा ज़िलों में, जहां ज़मीन काफी रेतीली है, 37 किलोग्राम यूरिया तथा 75 किलोग्राम सुपरफास्फेट और 10 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ बिजाई के समय

ड्रिल करें। यूरिया की शेष आधी मात्रा (37 कि.ग्रा.) बौकी आने पर डालें। यदि ज़मीन भारी है और कपास गेहूं के बाद ले रहे हैं तो भी खाद बिजाई के समय डालें। यदि कपास बोने से पहले ज़मीन खाली थी और ज़मीन भारी किस्म की है तो सिर्फ फास्फोरस और ज़िंक की मात्रा ही बिजाई से पहले डालें। सुपर फास्फेट हमेशा ड्रिल द्वारा डालनी चाहिए।

कपास की देसी किस्मों के लिए फास्फोरस की मात्रा की सिफारिश तभी की जाती है जब मिट्टी परीक्षण में फास्फोरस की कमी हो। यदि देसी कपास रेतीली व कमज़ोर भूमि में बो रहे हैं तो बिजाई के समय 45 किलोग्राम यूरिया प्रति एकड़ अवश्य डालें। 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ डालें।

संकर कपास में नत्रजन और फास्फोरस की दुगुनी मात्रा डालें तथा पोटाश भी 40 किलोग्राम प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें।

मृदाजनित एवं बीजजनित रोगों से बचाव के लिए बीज का उपचार करके ही बिजाई करें। इसके लिए 10 लीटर फफूंदनाशक दवा के घोल (10 लीटर पानी में एक ग्राम स्ट्रैप्टोसाइक्लिन व 1 ग्राम सक्सीनिक तेज़ाब) में 5 किलोग्राम रोएंदार बीज या 7½ कि.ग्रा. रोएं उतारे हुए (डिलिंटेड) बीज को भिगोएं। रोएं वाले बीज को 6-8 घंटे तक तथा रोएं उतारे गए बीज को केवल 2 घंटे तक ही भिगोएं। जिन क्षेत्रों में पिछले वर्षों में जड़ गलन की गंभीर समस्या देखी गई हो उन खेतों में कपास की बिजाई न करके ज्वार या बाजरे की खेती करें या 2.0 ग्राम बाविस्टिन प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचार अवश्य करें। नरमा कपास का पत्ती मरोड़ रोग जहां पर पिछले साल देखा गया हो वहां देसी कपास या नरमा की प्रतिरोधी किस्म एच 1117, एच एच एच 223 की ही काश्त करें।

जिन खेतों में पिछले वर्षों में दीमक का प्रकोप देखा गया हो वहां बिजाई से पहले प्रति किलोग्राम बीज को 10 मि.ली. क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. व 10 मि. ली. पानी के घोल से उपचारित करें। बीज को भिगोने के बाद ही इसे कीटनाशक के घोल से उपचारित करें। खरपतवार नियन्त्रण हेतु कपास की बिजाई के तुरन्त बाद पेन्डीमैथलीन (स्टोम्प 30 ई.सी.) की 2 लीटर मात्रा प्रति एकड़ के हिसाब से 200-250 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। इन खरपतवारनाशकों के प्रयोग के समय मृदा में उचित नमी का होना ज़रूरी है। मीलीबग के नियंत्रण के लिए बंजर भूमि पर व खेतों के आस-पास, मेढ़ों, खालों व रास्तों आदि पर उगने वाले खरपतवारों जैसे गाजर (कांग्रेस) घास, कांगी बूटी तथा कपास की पिछली फसल के ठूंठों से उगने वाले पौधों को नष्ट करें। कपास की छंट्टियों के ढेरों के नीचे गिरे टिण्डों, पत्तों आदि को जला दें।

गन्ना

गर्मियों में 10 दिन के अंतर पर सिंचाई करें। मोढ़ी में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। खरपतवार नियंत्रण के लिए ऐट्राजीन 50% घु. पा. 1.6 कि.ग्रा. प्रति एकड़ का छिड़काव 250-300 लीटर पानी में घोलकर करें। इसके बाद चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के लिए 2,4-डी (सोडियम साल्ट) 1.0 कि.ग्रा. प्रति एकड़ की दर से 250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। पहला छिड़काव बिजाई के 3 सप्ताह बाद करें, गन्ने की बीजू या नौलफ फसल में इस माह के अंत तक नाइट्रोजन वाली खाद की दूसरी मात्रा (45 किलोग्राम यूरिया) प्रति एकड़ खेत से घास-फूस निकालकर छिट्टे द्वारा डालें व ऊपर से हल्की सिंचाई करें। मोढ़ी फसल में उपर्युक्त खादों की डेढ़ गुनी मात्रा का प्रयोग करें।

मोढ़ी फसल में दीमक और कनसुआ की रोकथाम के लिए 2.5 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. प्रति एकड़ सिंचाई के साथ लगाएं।

अगर गन्ने में पाइरिल्ला (अल) का आक्रमण हो व इसे मारने वाले परजीवी न हों तो 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

कभी-कभी काली बग (काली कीड़ी) के आक्रमण के कारण भी फसल पीली पड़ जाती है। अत: इस कीट के नियंत्रण के लिए 400 मि.ली. क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. को 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। छिड़काव गोभ पर करें ताकि दिन के समय बच्चे तथा प्रौढ़ नष्ट हो जाएं। कभी-कभी अष्टपदी (माईट) का आक्रमण होने से पत्तों पर लाल रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इसके लिए 600 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

सब्जियों में

टमाटर

नाइट्रोजन वाली खाद खड़ी फसल में दो बार दें-पहली पौधरोपण के लगभग 3 सप्ताह बाद व दोबारा पहली मात्रा के एक महीने बाद। हर बार 12.5 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (27 कि.ग्रा. यूरिया) प्रति एकड़ की दर से दें। खाद देने के बाद सिंचाई करना न भूलें। सामान्यत: गर्मी के दिनों में 6 से 7 दिनों के अंतर पर सिंचाई करने की आवश्यकता होती है। रस चूसने वाले कीटों को मारने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। इस छिड़काव से टमाटर के वायरस रोगों की रोकथाम भी हो जाएगी। फल छेदक के लिए 1 लीटर निम्बीसीडीन को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

बैंगन

गर्मी के महीनों में सिंचाई का ध्यान रखें तथा खरपतवार निकालें। फलों को कच्ची व नरम अवस्था में तोड़ें तथा तोड़ते समय यह उचित होगा कि किसी तेज़ चाकू या ऐसे अन्य औज़ार को प्रयोग में लाएं जिससे कि टहनियां न टूटें। खड़ी फसल में 2 बार में 28 किलोग्राम नाइट्रोजन (14+14) प्रति एकड़ की दर से दें। पहली मात्रा रोपाई के 30 दिन बाद और दूसरी मात्रा 60 दिन बाद लगाएं।

मिर्च

प्लानोफिक्स या पौध वर्धक रसायन 40 मि.ली. दवा को 150 लीटर पानी में मिलाकर फूल आने के समय छिड़काव करें। इस दवा के प्रयोग से फल-फूल गिरने की समस्या काफी हद तक रुक जाती है। थ्रिप्स, अल और सफेद मक्खी से रक्षा करने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें। छिड़काव 15-20 दिन के बाद दोहराएं। इस छिड़काव से मिर्च के वायरस रोगों की भी रोकथाम हो जाएगी।

मूली

मूली की गर्मी की फसल के लिए सिर्फ पूसा चेतकी किस्म को ही प्रयोग में लाएं।

भिण्डी

कीटों (हरा तेला और चित्तीदार सूण्डी) से बचाव के लिए 300-500 मि. ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-300 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। दवाई छिड़कने के बाद 8-10 दिन तक फल खाने के प्रयोग में न लें।

तरबूज व खरबूजा

चेपा, हरा तेला, माईट का प्रकोप होने पर 250 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। आवश्यकता पडने पर फिर दोहराएं। यदि फलों में मक्खी का आक्रमण हो गया हो तो खराब फलों को तोड़कर नष्ट कर दें तथा 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 1.25 किलोग्राम गुड़ और 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। सफेद चूर्णी नामक रोग होने पर 500 ग्राम घुलनशील गंधक (सल्फैक्स) को 200 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

कद्दू जाति की अन्य सब्जियां

सिंचाई करें तथा खरपतवार निकालें। यदि खाद की दूसरी मात्रा न दी हो तो प्रति एकड़ 6 कि.ग्रा. नाइट्रोजन दें तथा सिंचाई करें।

वृद्धि नियामकों का प्रयोग

घीया (लौकी) की फसल में इथ्रैल नामक दवा के प्रयोग से अधिक उपज प्राप्त होती है। इस दवा से उपचार के लिए फसल का दो सच्ची पत्ती और चार सच्ची पत्ती की अवस्था पर उपचार करने की आवश्यकता होती है। इथ्रैल नामक दवा के प्रयोग के लिए 100 पी. पी. एम. का घोल बनाएं (4 मि. ली. इथ्रैल 50 प्रतिशत को 20 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ फसल पर प्रयोग करें) तथा ऊपर बताई 2 और 4 पत्ती की अवस्थाओं पर छिड़काव करें। इन दवाओं के प्रयोग से मादा फूल अधिक संख्या में आते हैं जिससे उपज में वृद्धि हो जाती है। ध्यान रखें कि घोल में चिपचिपाहट लाने वाला पदार्थ (जैसे कि सेल्वेट-99, टिट्रान या अन्य) भी मिला लें।

अरबी

नाइट्रोजन की खाद खड़ी फसल में दो बार दें - पहली बिजाई के लगभग 3-4 सप्ताह बाद और इतनी ही मात्रा लगभग इतने ही दिनों के बाद।

शकरकन्दी

अप्रैल से जुलाई माह तक शकरकन्दी की काट खेत में लगाते हैं। शकरकन्दी की किस्में पूसा लाल व पूसा सफेद प्रयोग में लें। बिजाई के लिए 24,000 से 28,000 बेलों की कटिंग की एक एकड़ में आवश्यकता होती है। 60 सैं.मी. के फासले पर बनी डोलों में काट लगाएं। एक पौधे से दूसरे पौधे की दूरी 30 सैं.मी. रखें। खेत तैयार करते समय 10 टन गोबर की गली-सड़ी खाद, 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 200 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफास्फेट तथा 55 कि. ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति एकड़ की दर से काटें लगाने से पहले दें।

अगेती फूलगोभी

फूलगोभी की किस्म पूसा कातकी लगाएं। इसकी अगेती खेती के लिए नर्सरी में बिजाई की जा सकती है। एक एकड़ खेत के लिए लगभग 300-500 ग्राम बीज की आवश्यकता होगी। इसके बीज का उपचार कैप्टान नामक दवाई से (ढाई ग्राम दवा प्रति किलो बीज की दर से) करें। बिजाई पंक्तियों में करें तथा नर्सरी उठी हुई बनाएं।

फलों में

नींबू वर्गीय फल

नए पौधों की हर सप्ताह सिंचाई करें। फलों को गिरने से बचाने के लिए महीने के शुरू में ही 6 ग्राम 2,4-डी, 12 ग्राम आरियोफन्जिन व 1500 ग्राम ज़िंक सल्फेट को 550 लीटर पानी में घोल बनाकर पौधों पर छिड़कें। फल देने वाले पौधों की सिंचाई 10-15 दिन के अंतराल पर करते रहें। कीड़ों व बीमारियों के नियंत्रण के लिए अप्रैल माह के लिए दी गई विधि अपनाएं। जब नींबूवर्गीय पौधों में कपास या सूरजमुखी की फसल खड़ी हो तो 2,4-डी की जगह 20 मि.ग्रा. प्रति लीटर एन.ए.ए. दवाई का प्रयोग करें।

आम

आम के फलों को गिरने से बचाने के लिए 1½ से 2% यूरिया का घोल छिड़कें।

आड़ू व अलूचा

बागों की सिंचाई नियमित रूप से करते रहें। फ्लोरेडासन व सनरेड किस्में पकने लगेंगी। यदि चेपा (माहू) का आक्रमण हो तो 500 मि.ली. डाइमिथोएट 30 ई.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

बेर

एक साल पुरानी टहनियों को 6 सेक्डरी तक काटें। बेर के पौधों की इस माह में कटाई-छंटाई पूरी करें। पूर्ण विकसित पौधों में 100 किलोग्राम प्रति पौधा गोबर की खाद डालकर गहरी जुताई करें व सिंचाई करें।

नोट : सदाबहार फलदार पौधों को गर्मी से बचाने का प्रबंध करें। पौधों के मुख्य तनों पर ब्लाईटॉक्स या बोर्डो मिश्रण का लेप लगाना चाहिए।

छोटे पौधों को गर्मी से बचाने के लिए पौधे से 2 इंच की दूरी पर ढैंचा की बिजाई चारों तरफ करें।

पशुओं में

गाय-भैंस

मई मास में अधिक तापमान की संभावना रहती है या कहीं-कहीं आंधी-तूफान भी आ सकते हैं। अत: पशुओं का इस प्रकार से प्रबंधन करना चाहिए कि गर्मी के मौसम में होने वाले रोग, हीट स्ट्रोक (तापघात), पानी व नमक की कमी, भूख या पाचन कम होना या उत्पादन कम होने जैसी समस्याओं का सामना पशुपालकों को न करना पड़े। इन बातों को ध्यान में रखते हुए ही कुछ महत्वपूर्ण प्रबंधन संबंधी सुझाव इस प्रकार हैं :

- मई मास (या अप्रैल में) गलघोंटू व मुंह-खुर के टीकाकरण हो जाने चाहिएं। ध्यान रहे ये रोग पशुओं के लिए प्राणघातक साबित हो सकते

हैं, अत: किसी भी भ्रम में न पड़कर (विशेषकर दूध-उत्पादन संबंधी) इन रोगों के टीकाकरण अपने पशु-चिकित्सक की सलाहानुसार करें।

- मई मास में लू एवं सीधी गर्म हवाओं से पशुओं का बचाव करें। पशुओं के लिए ऐसी व्यवस्था रखें कि जिससे पशुओं को छाया भी मिले व सीधी लू भी न लगे। आमतौर पर पशुपालक अच्छी छाया के बाद इस तथ्य को नज़रंदाज़ कर देता है व पशु तापघात का शिकार हो जाते हैं।
- तापघात के लक्षण व पहचान-पशु का मुंह खोलकर तेज़ सांस लेना, बढ़ी हुई हृदय गति अत्यधिक शारीरिक तापमान (106-108 डिग्री फार्नहाइट) इत्यादि।
- तापघात (हीट स्ट्रोक) से बचाने हेतु प्रबंधन : पशुओं को (विशेषकर भैंसों को) तापघात से बचाने हेतु पशुपालक कई प्रबंधन उपाय कर सकता है, जैसे कि 24 घण्टे ताज़ा पानी की व्यवस्था, पानी के साथ-साथ नमक भी उपलब्ध कराना (पोटाशियम की कमी रोकने हेतु) दोपहर की बजाय, सांय/रात्रि काल में भोजन की व्यवस्था, कम रेशे, उच्च ऊर्जा व सुपाच्य भोजन की उपलब्धता, पशु-आहार में बाई-पास प्रोटीन (मछली-चूरा इत्यादि) का इस्तेमाल, फार्म या पशु आवास में ताज़ा हवा के आवगमन की व्यवस्था, पंखे/कूलर आदि का प्रबंध, भीगी बोरी इत्यादि से तापमान नियंत्रण करना, फव्वारों का इस्तेमाल व दिन में 2-3 बार नहलाने की व्यवस्था आदि करके पशुपालक बिना किसी उत्पादन के नुकसान के इस मौसम में पशुओं को स्वस्थ रख सकता है। कई बार पशुपालक गर्मियों में दूध कम होने की समस्या रखता है। ध्यान रहे कि यदि पशु के शरीर में पानी की कमी होगी तो दूध भी कम होगा। अत: प्रयास करें कि हर पशु को 24 घण्टे ताज़ा पानी की उपलब्धता रहे और यदि किसी कारणवश ऐसा नहीं कर सकते तो कम से कम पशुओं को दिन में 4-5 बार नमक या लवणों-युक्त पानी ज़रूर पिलाएं व दिन में दो बार ज़रूर नहलाएं या उन पर पानी डालें। केवल मात्र इस प्रबंधन से ही किसान गर्मी में कम दूध के होने के नुकसान से बच सकता है व इस मौसम में अच्छे भाव से अपनी आय नियमित रख सकता है।
- हर मौसम में व हर पशु को खनिज मिश्रण (मिनरल मिक्चर) अवश्य दें, पशुपालक इसे हल्के में न लें। यह पाऊडर पशुओं के लिए 'रामबाण' साबित हो सकता है।
- पशु-आहार में गेहूं का चोकर और जौ की मात्रा बढ़ाएं।
- चारे के लिए बोई गई चरी, मक्का आदि की कटाई करें।
- भेड़ों में ऊन कतरने का कार्य करें।

यदि आप अपने पशुओं को मई मास में गलघोंटू रोग से बचाव का टीका लगवा लें तो बरसात में यह रोग नहीं होगा। गाय व भैंसों में फड़ सूजने या पुट्ठे सूजने का रोग बरसात के मौसम में हो जाता है। पुट्ठे सूजन रोग के बचाव का टीका पशुओं को लगाने से यह रोग नहीं होता। यह टीका पशु चिकित्सालय में मुफ्त लगता है। चार मास से 3 वर्ष तक की आयु के सभी गो-जाति के पशुओं को यह टीका अवश्य लगवा लेना चाहिए।

पशुओं में मुंह व खुरपका रोग से बचाव का टीका अपने नज़दीकी पशु चिकित्सालय से लगवा लें। यदि रोग हो जाए तो रोगी पशु को दूसरे पशुओं से अलग कर दें। ध्यान रहे कि एक रोग का टीका लगवाने के बाद दूसरे रोग का टीका 15 दिन बाद ही लगवाएं।

इस माह पशुओं को लू लगने से दूध की क्षमता घट जाती है और वे बीमार हो सकते हैं। उन्हें छायादार पेड़ों के नीचे रखें और पीने के साफ पानी की कमी न आने दें। भैंसों को पानी के छिड़काव व नहलाने से उनकी दूध देने की क्षमता बनी रहती है। पशुओं की खुराक में खनिज मिश्रण (मिनरल मिक्सचर) का लगातार प्रयोग करें। प्रत्येक पशु को 50 ग्राम खनिज मिश्रण रोज़ाना देना चाहिए। पशुओं के राशन में बिनौले की बजाय, बिनौले की खल तथा ग्वार की बजाय ग्वार की चूरी देनी चाहिए तथा पशुओं को संतुलित आहार देने से उनकी उत्पादन क्षमता बनी रहती है तथा इन्हें अन्य रोगों से बचाया जा सकता है तथा भैंसें इस मौसम में गर्मी में भी आती रहती हैं।

भेड़ें

इस मास भेड़ों की ऊन काटी जाती है। ऊन काटने से पहले भेड़ों में पुट्ठे सूजने के रोग से बचाव का टीका नज़दीकी पशु चिकित्सालय से अवश्य लगवाएं। भेड़ के पेट में कीड़े होने के कारण उनकी वृद्धि कम होती है और उनसे ऊन की प्राप्ति कम होती है। अपने पशु चिकित्सक की सलाह से भेड़ों को कृमिनाशक दवाई दें।

अब भेड़ों का प्रजनन काल आरंभ होने वाला है। अपनी भेड़ों में आप प्रजनन के लिए अच्छी नस्ल के मेढ़े का प्रयोग करें। अच्छी नस्ल के मेढ़े आप अपने क्षेत्र के भेड़ व ऊन केन्द्र, पशुधन फार्म हिसार एवं केन्द्रीय भेड़ प्रजनन फार्म, हिसार से ले सकते हैं।

कुक्कुटों में

मुर्गियों को रानीखेत एवं चेचक का टीका लगवाएं। छत पर सफेदी करें। मुर्गीघर पूर्व-पश्चिम दिशा में हो। मुर्गी आहार में लगभग 2 प्रतिशत प्रोटीन अधिक दें। दोपहर में जब खूब गर्मी पड़ती है तो खिड़कियों को गीली बोरी आदि से ढक कर रखें। मुर्गियों को ठण्डे पानी में इलैक्ट्रोलाइट पाऊडर डालकर पिलाएं। बिछावन को दिन में चार बार पलटें और आहार को भी फीडर में दिन में पांच-छ: बार डालें। मुर्गीघर के बाहर शहतूत के पेड़ लगाएं। छत पर भी फूस डालें। पिलाने के लिए पानी घड़े में रखें और पानी की पाइप को चारों तरफ से टाट लपेट कर रखें। प्रत्येक 15 दिन बाद मुर्गी आहार बनाएं।

घर-आंगन में

अप्रैल के महीने में मौसम परिवर्तन के कारण शरीर के लिए पानी की ज़रूरतें भी बढ़ जाती हैं और थोड़ी देर के बाद ही कुछ ठण्डा पीने का मन करता है। इन दिनों बाज़ार में पेय बनाने वाले फल एवं सब्जियां प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती हैं। अत: आप इनसे प्रचुर मात्रा में घर पर ही पेय पदार्थ बनाकर उपयोग में ला सकते हैं एवं इन्हें आय उपार्जन के रूप में भी अपना सकती हैं। पेय पदार्थों को घर पर बनाने के लिए आप अपने ज़िले में स्थित ज़िला विस्तार विशेषज्ञ (गृह विज्ञान) या ज़िला विस्तार विशेषज्ञ (बागवानी) से संपर्क कर सकते हैं।

फार्म प्रबन्ध

इस माह किसानों के फसल उत्पाद बिक्री के लिए तैयार होते हैं। किसानों को सलाह दी जाती है कि अपने अन्न उत्पाद गांव के व्यापारी या घुमन्तु व्यापारियों को न बेचकर केवल नियमित मण्डी एवं इलेक्ट्रॉनिक बाज़ार के माध्यम से बेचें। मण्डी में बिक्री के लिए ले जाने से पहले निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें :

1. मण्डी में ले जाने से पहले अनाज की भली प्रकार सफाई कर लें तथा अनाज को अच्छी तरह सुखा लें।
2. अलग प्रकार के अनाज को अलग-अलग बेचें। बढिया किस्म के अनाज की कीमत हमेशा ज़्यादा मिलती है।
3. फसल उत्पाद को ग्रेड करा लेने के बाद उसकी उचित कीमत लगती है। कृषि विभाग द्वारा प्रमुख मण्डियों में कपास व खाद्यान्नों की ग्रेडिंग के लिए केन्द्र स्थापित किए गए हैं। इन केन्द्रों पर किसानों की उपज की नि:शुल्क ग्रेडिंग की सहूलियत उपलब्ध है।
4. कटाई के बाद किसान अपनी उपज को एक साथ ही मण्डियों में न लाकर उसे धीरे-धीरे लाएं जिससे कठिनाई न उठानी पड़े तथा उनकी उपज का सही मूल्य उन्हें मिल सके।
5. फसल उत्पाद को जहां तक संभव हो सहकारी संस्था अथवा सहकारी सोसाइटी के माध्यम से बेचें तथा यह ध्यान रखें कि उपज का समर्थन मूल्य प्राप्त हो। फसल बेचने में यदि कोई कठिनाई आए तो स्थानीय बाज़ार (मार्केट) के कर्मचारियों से संपर्क करें।
6. अपनी फसल खुली बोली पर ही बेचें व अपनी उपस्थिति में तोल करवाएं।
7. किसान से मण्डी में उतराई/अराई/सफाई के खर्च काटे/वसूल किए जाते हैं।
8. किसान अपनी फसल उत्पाद बिक्री का हिसाब करके 'जे' फार्म अवश्य लें।
9. किसान आने वाली खरीफ फसलों के बीजों की खरीद सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थानों के बिक्री केन्द्रों से ही करें।
10. किसान गुणवत्ता बीजों की ही बिजाई करें। ◆

आजीवन सदस्यों के लिए आवश्यक सूचना

''**हरियाणा खेती**'' के पंजीकृत सभी आजीवन सदस्यों को यह सूचित किया जाता है कि हम मासिक पत्रिका ''**हरियाणा खेती**'' की आजीवन सदस्यता को पंजाब कृषि विश्वविद्यालय की तर्ज पर (30 वर्ष की अवधि) के लिए कर रहे हैं। जिन पंजीकृत सदस्यों की सदस्यता को 30 वर्ष या इससे अधिक हो चुके हैं उन्हें हम हरियाणा खेती पत्रिका नहीं भेज पाएंगे। जिन सदस्यों की सदस्यता समाप्त हो रही है वे 1500 रुपये आजीवन (30 वर्ष के लिए) या 150 रुपये वार्षिक देकर अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करवा सकते हैं। **-सह-निदेशक प्रकाशन**

मौसमी फल एवं सब्जियों का कोविड 19 के परिप्रेक्ष्य में सुरक्षित प्रयोग

वीनू सांगवान एवं भव्या संधु
खाद्य एवं पोषण विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हम सब जानते व देखते हैं कि गर्मी के मौसम में सब्जी मंडियों में विभिन्न प्रकार के फल व सब्जियां उपलब्ध हैं। उदाहरणत: खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, अंगूर, आम, पपीत, केला, सेब, लीची, खीरा, नींबू, घीया, तोरी, टमाटर, प्याज़, लहसुन, अदरक, धनिया, पुदीना इत्यादि। इन फल एवं सब्जियों की खास बात यह है कि इनमें प्रचुर मात्रा में विभिन्न प्रकार के विटामिन्स जैसे बीटा-केरोटीन, विटामिन सी, फोलिक एसिड, मिनरल्स जिन्हें खनिज लवण कहा जाता है जैसे सोडियम, पोटशियम, मैगनीशियम, लौह तत्व, इत्यादि पाए जाते हैं। इनके अलावा इनमें पानी, रेशा, एंटीओक्सीडेंट्स व फाइटोकैमिकल्स प्रचुर मात्रा में होते हैं। इसलिए इन्हें सुरक्षात्मक खाद्य पदार्थ भी कहा जाता है।

जैसा कि हम सब जानते हैं कि किसी भी बीमारी से बचने के लिए संतुलित आहार लेना कितना आवश्यक है। फल एवं सब्जियों के बिना कोई भी आहार पौष्टिकता की गुणवत्ता पर कारगर नहीं उतर सकता। क्योंकि इनमें पाए जाने वाले विभिन्न पौष्टिक तत्व हमारे शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता को बढ़ाते हैं जैसे विटामिन 'सी' जो कि खट्टे फलों से मिलती है जैसे आंवला, संतरा, नींबू, अमरूद इत्यादि हमारे शरीर में एंटीओक्सीडेंट की तरह काम करता है व हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है जो कि एक स्वस्थ जीवन जीने के लिए बहुत ही आवश्यक है। क्योंकि फल एवं सब्जियों में वसा व कैलोरी की मात्रा कम होती है व इनमें रेशा अच्छी मात्रा में पाया जाता है इसलिए जो लोग फल एवं सब्जियों का सही मात्रा में प्रयोग करते हैं व उनमें कब्ज़, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मोटापा, हीट स्ट्रोक, कोलेस्ट्रोल, खून की कमी एनीमिया, व विभिन्न प्रकार के कैंसर से वे बचे रहते हैं। अच्छे प्रतिरक्षा तंत्र से इस वैश्विक महामारी कोविड-19 (कोरोना वायरस) से बचाव किया जा सकता है। इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि विभिन्न प्रकार के रंगों वाले ताज़े फल एवं सब्जियों का हम नियमित सेवन करें। रोज़ कम से कम 100 ग्राम फल व 400 ग्राम सब्जियों का सेवन प्रति व्यक्ति प्रति दिन विभिन्न प्रकार से करना चाहिए। जहाँ तक हो सके इन्हें सलाद के रूप में अधिक से अधिक भोजन में सम्मिलित करें। पपीता, पेठा, आम इनमें बीटा-केरोटीन पाया जाता है जो कि हमारे शरीर को रोगों से लड़ने की क्षमता को बढ़ाता है व विभिन्न प्रकार की आँखों की बीमारियों से भी बचाव करता है।

कोरोना वायरस के परिपेक्ष्य में फल एवं सब्जियों को लेकर विभिन्न प्रकार की भ्रांतियाँ भी फैल रही हैं जैसे कि इनसे कोरोना फैल सकता है। अभी तक ऐसी कोई रिपोर्ट नहीं आई है जो ये दावा करती है कि कोरोना वायरस खाने से फैलता है। यह हो सकता है कि कोरोना वायरस किसी सतह या खाने की वस्तु पर मौजूद हो। इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि जब भी बाहर से कोई फल व सब्जी लाएं तो उसे अच्छे से पानी से धोएं। यह ध्यान रखें कि आप जब भी फल व सब्जियों खरीदने जाएं तो घर से ही कपड़े का

(शेष पृष्ठ 19 पर)

सूक्ष्मजीवों द्वारा विषाक्त पदार्थों का जैव निम्नीकरण

✍ **कविता रानी, निधि शर्मा एवं लीलावती**
सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

जैव निम्नीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमे विषैले पदार्थों को कम विषाक्त या गैर विषैले पदार्थों में तोड़ने के लिए स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले जीवों का उपयोग किया जाता है। सूक्ष्मजीवों द्वारा किए गए जैव निम्नीकरण को 'माइक्रो-रेमेडिएशन' कहा जाता है तथा इस कार्य को करने के लिए उपयोग किए जाने वाले सूक्ष्मजीवों को 'बायोरेमेडिएटर्स' के रूप में जाना जाता है। सूक्ष्मजीवों को विकास के लिए आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्वों के रूप में भारी धातुओं की अलग-अलग मात्रा की आवश्यकता होती है। विकास की अनुकूल परिस्थितियों, जैसे पीएच, तापमान, नमी, विटामिन और खनिज पदार्थ जैसे मैग्नीशियम, मैंगनीज़, तांबा, सल्फर, पोटेशियम, फास्फोरस और नाइट्रोजन जैसे पोषक तत्वों की पर्याप्त आपूर्ति में रोगाणु अतिरिक्त एंजाइम और एसिड के स्राव द्वारा जटिल विषैले कार्बनिक रसायनों को सरल और हानिरहित पदार्थों में बदल सकते हैं। स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले बैक्टीरिया के साथ-साथ विषैले पदार्थों और रसायनों को नष्ट करने में सक्षम कुछ कवक को भी आमतौर पर जैव निम्नीकरण के लिए उपयोग किया जाता है। माइक्रो-रेमेडिएशन शब्द विशेष रूप से जैव निम्नीकरण में कवक के माइसेलिया के उपयोग को संदर्भित करता है। माइक्रोफिल्ट्रेशन एक ऐसी ही प्रक्रिया है, जो मृदा में उपस्थित पानी में से विषाक्त अपशिष्ट और सूक्ष्मजीवों को फिल्टर करने के लिए कवक माइसेलिया का उपयोग करती है।

जैव निम्नीकरण का वर्गीकरण

इन-सीटू जैव निम्नीकरण में प्रदूषित स्थान पर प्रदूषकों को हटाने के लिए जीवों या एंजाइमों का उपयोग किया जाता है। यह सस्ता है क्योंकि इसमें कोई उत्खनन, परिवहन एवं मज़दूर शुल्क शामिल नहीं है। इन-सीटू जैव निम्नीकरण के लिए औसत समय सीमा 12 से 24 महीने है इसलिए इसे अधिक समय की आवश्यकता है। इसका उपयोग भूजल प्रदूषण को दूर करने के लिए किया जा सकता है।

एक्स-सीटू जैव निम्नीकरण में अपने मूल स्थान से दूषित सामग्री को हटाने और एक ऐसी जगह पर एकत्र करना शामिल है, जहां इसे उपचारित किया जा सकता है। यह क्षेत्र, गहराई, पोषक तत्वों, ऑक्सीजन, नमी, अस्थायी आदि पर बेहतर नियंत्रण प्रदान करता है। एक्स-सीटू जैव निम्नीकरण के लिए औसत समय सीमा 60 से 90 दिनों की है, इसलिए इन-सीटू जैव निम्नीकरण की तुलना में यह तेज़ी से होता है। एक्स-सीटू जैव निम्नीकरण का उपयोग उत्खनन, परिवहन, श्रम लागत, आदि के रूप में महंगा है।

जैव निम्नीकरण की विधियाँ

जैव उद्ग्रहण - अवांछित रसायनों को हटाने के लिए किसी पदार्थ में जीवों या एंजाइमों को शामिल किया जाता है। इसका उपयोग संभावित प्रदूषकों से उपोत्पाद निकालने के लिए किया जाता है। जीवाणु सबसे आम जैव उद्ग्रहण जीव हैं।

बायोफिल्टर्स - इसमें खाद या मृदा के माध्यम से वायु को पारित करके कार्बनिक गैसों को हटाना शामिल है, जो गैसों को क्षीण करने में सक्षम हैं। इसका उपयोग वायु से वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों (वीओसी) को हटाने के लिए किया जाता है।

बायोरिएक्टर - इसमें एक बड़े टैंक में दूषित पदार्थ का उपचार होता है जिसमें जीव या एंजाइम होते हैं। ये आमतौर पर ठोस अपशिष्ट और मृदा से विषाक्त प्रदूषकों को हटाने के लिए उपयोग किये जाते हैं।

बायोस्टिम्यूलेशन - इसमें स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले जीवों को उत्तेजित करने के लिए पोषक तत्वों का उपयोग होता है जो जैव निम्नीकरण कर सकते हैं। उर्वरक और पोषक तत्व आम उत्तेजक हैं। प्रदूषक की छोटी मात्रा की उपस्थिति भी जैव निम्नीकरण के एंजाइमों के लिए ऑपरोन को चालू करके एक उत्तेजक के रूप में कार्य कर सकती है।

बायोवेंटिंग - इसमें प्राकृतिक और बाहर से शामिल किए गए जैव निम्नीकरण के जीवों के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए मृदा के माध्यम से ऑक्सीजन का वेंटिलेशन शामिल है। इसका उपयोग मुख्यत: पेट्रोलियम उत्पादों से दूषित मृदा के लिए किया जाता है। यह ओज़ोन परत के नुकसान में योगदान देने वाली हैलोज़ेन गैसों को हटाने के लिए उपयुक्त नहीं है।

कंपोस्टिंग - इसमें दूषित पदार्थ मिश्रित होते हैं जिनमें जैव निम्नीकरण के जीव होते हैं। मिश्रण एरोबिक और गर्म परिस्थितियों में होते हैं। परिणामी खाद को मृदा में वृद्धि के रूप में प्रयोग किया जा सकता है या सैनिटरी लैंडफिल में रखा जा सकता है।

लैंडफार्मिंग - इसमें दूषित क्षेत्र में जैव निम्नीकरण जीवों के विकास को प्रोत्साहित करने के लिए खेती और मृदा संशोधन तकनीकों का उपयोग किया जाता है। मृदा में बड़े पेट्रोलियम स्पिल्स को हटाने के लिए इसका सफलतापूर्वक उपयोग किया जाता है।

प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले बैक्टीरिया और कवक जो जैव-अपघटन द्वारा कुछ विषैले रसायनों को नष्ट करने में सक्षम हैं-

सूक्ष्मजीव	विषैले रसायन
नोकार्डिया, स्यूडोमोनास	डिटर्जेंट
ट्राइकोडर्मा, स्यूडोमोनास	मेलाथियान
क्लोस्ट्रीडियम	लिंडेन
एस्चेरिचिया, हाइड्रोजोमोनस, सैक्रोमाइसेस	डी डी टी
म्यूकर	डाइएलड्रिन
फाइनेरोचीट क्राइसोसपोरियम,	हेलोकार्बन जैसे लिंडेन, पेंटाक्लोरोफेनोल
फाइनेरोचीट सॉर्डिडा और ट्रैमिट्स हिर्स्यूट	डी डी टी, डी डी ई, पी सी बी
म्यूकर	डाइएलड्रिन
खमीर (सैक्रोमाइसेस)	डी डी टी

जैव निम्नीकरण को प्रभावित करने वाले कारक :

- प्रदूषक अपघटन क्षमता वाले सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति।
- गहराई, क्षेत्र और प्रदूषक की मात्रा।

- कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्व स्तर।
- मृदा की पीएच और बनावट।
- पारगम्यता और जल धारण क्षमता।
- ऑक्सीजन और अन्य इलेक्ट्रॉन स्वीकर्ता की उपस्थिति के लिए संकलन

जैव निम्नीकरण के लाभ :

- इन-सीटू जैव निम्नीकरण प्रदूषित स्थान पर किया जा सकता है।
- प्रदूषित स्थान के व्यवधान को न्यूनतम रखता है (समुद्र तटों में बहुत महत्वपूर्ण)।
- प्रदूषक के संपर्क में आने का जोखिम समाप्त हो जाता है।
- इन-सीटू जैव निम्नीकरण के मामले में परिवहन लागत और देनदारियों को समाप्त करता है।
- उपचार प्रक्रिया से न्यूनतम पर्यावरणीय प्रभाव।
- प्रक्रिया के पूरा होने पर गैर विषैले पदार्थों का अंत उत्पाद, जैसे-कार्बन डाइऑक्साइड, पानी और फैटी एसिड।

जैव निम्नीकरण के नुकसान :

- यह सभी स्थितियों के अनुरूप नहीं है।
- जैव निम्नीकरण की प्रक्रिया आम तौर पर एक धीमी प्रक्रिया होती है।
- सभी प्रदूषक पदार्थों का अपघटन नहीं किया जा सकता है। कई धातुएँ सूक्ष्मजीवों के लिए अत्यधिक विषैली होती हैं।
- व्यावसायीकरण के लिए बाधाएं। *

(पृष्ठ 17 का शेष)

थैला ले कर जाएं व इस थैले को भी घर पर बाद में अच्छी तरह से धोएं। जब भी खरीदारी करने जाएं इस बात का ध्यान रखें कि सामान लाने के लिए घर का सबसे ज़िम्मेदार सदस्य ही जाए जो कि हर तरह की सावधानियों का पालन कर सके। जहाँ तक संभव हो सामान लाने परिवार का एक ही सदस्य हर बार जाए। कोरोना वायरस के समय में सुरक्षित भोजन व स्वास्थ्य के लिए इन बातों का ध्यान रखें :

1. व्यक्तिगत स्वच्छता
2. कच्चे व पक्के हुए भोजन को अलग-अलग रखें।
3. भोजन को अच्छी तरह से पकाएं और ताज़ा खाएं। यदि भोजन को दोबारा इस्तेमाल करना पड़े तो उसे अच्छी तरह से गर्म करके ही खाएं।
4. भोजन को सुरक्षित तापमान (यानि 5 डिग्री सैंटीग्रेड से कम या 65 डिग्री सैंटीग्रेड से अधिक) पर रखें।
5. फल एवं सब्जियों एवं अन्य कच्चे खाद्य पदार्थों को धोने के लिए स्वच्छ व पीने योग्य पानी का ही इस्तेमाल करें।

''पौष्टिक, संतुलित, स्वच्छ एवं सुरक्षात्मक भोजन खाएंगे व कोरोना को हराएंगे''

छपाई करने की विभिन्न प्रकार की विधियाँ

✍ **ललिता रानी एवं निशा आर्य**
वस्त्र एवं परिधान अभिकल्पन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

छपाई वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बुने हुए कपड़ों पर एक निश्चित डिज़ाइन में अलग-अलग रंग लगाकर उन्हें अधिक रंग-बिरंगा तथा सुंदर बनाया जाता है। ये प्रिंट एक अकेले डिज़ाइन के रूप में या सारे वस्त्र पर एक जैसे डिज़ाइन के रूप में छपे होते हैं। भारत में छपाई की कला हज़ारों वर्ष पुरानी है। प्राचीनकाल में भारत में की गई छींट के कपड़ों की छपाई, विश्वभर में प्रसिद्ध थी तथा ये वस्त्र अन्य देशों को निर्यात भी किए जाते थे।

छपाई के लिए उन्हीं रंगों का प्रयोग किया जाता है, जिन रंगों का प्रयोग वस्त्रों को रंगने के लिए किया जाता है। रंगाई के लिए रंगों को घोल के रूप में प्रयुक्त करते हैं तथा छपाई के लिए रंग के साथ माँड अथवा कोई रासायनिक पदार्थ मिलाकर, पेस्ट के रूप में प्रयोग किया जाता है। यदि रंगबंधकों का प्रयोग करना हो, तो वस्त्रों को प्रिंट करने से पहले रंगबंधकों के घोल से निकाला जाता है। यदि क्षार की आवश्यकता होती है तो वस्त्रों पर क्षारीय प्रक्रिया भी की जाती है।

छपाई करने की निम्नलिखित विधियाँ हैं:

अ. हाथ से छपाई ब. मशीनों द्वारा छपाई

अ. हाथ से छपाई : हाथ से छपाई दो प्रकार की होती है।

1. ठप्पों से छपाई : वस्त्रों की छपाई का यह सबसे पुराना तथा महँगा ढँग है। इस प्रकार की छपाई के लिए लकड़ी या एल्यूमिनियम के ठप्पों का प्रयोग किया जाता है। पहले डिज़ाइन को लकड़ी की सतह पर 1/4 इंच गहराई तक अंकित कर लेते हैं। फिर इस सतह को समान लंबाई तथा चौड़ाई वाले लकड़ी या एल्यूमिनियम के ठप्पे पर चिपका देते हैं। रंग का लेप बनाकर उसे किसी चौड़े मुँह वाले बर्तन में डाल देते हैं। जिस वस्त्र पर छपाई करनी होती है, उसे किसी बड़े गद्देदार मेज़ या समतल सतह पर फैला देते हैं। अब ठप्पों को रंग में भिगो कर वस्त्र पर लगा देते हैं तथा रंग सूखने देते हैं। यदि दो या दो से अधिक रंगों में छपाई करनी हो तो पहला रंग सूखने के बाद ही दूसरे रंग का प्रयोग करना चाहिए। अलग- अलग रंग के लिए अलग-अलग ठप्पे बनाए जाते हैं। इस ढंग से छपाई बहुत धीरे-धीरे होती है इसलिए बड़े स्तर पर इसका प्रयोग संभव नहीं है। भारत में ब्लॉक प्रिंटिंग राजस्थान, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु तथा गुजरात में की जाती है। सुंदर तथा आकर्षक छपाई के लिए ठप्पे को एक जैसे दबाव से दबाना चाहिए तथा रंग के लेप का गाढ़ापन भी एक जैसा रहना चाहिए।

2. स्क्रीन प्रिंटिंग/छपाई : इस प्रकार की छपाई में रेशमी या नायलोन के कपड़े की बहुत बारीक जाली एक लकड़ी के फ्रेम में कसकर लगाई जाती है। जाली अथवा स्क्रीन के छेदों को इनेमल, किसी जल अवरोधक वार्निश या किसी अघुलनशील पदार्थ से बन्द कर दिया जाता है। जाली पर डिज़ाइन ट्रेस कर लिया जाता है। जिन स्थानों पर रंग लगाने की आवश्यकता होती है,

उन स्थानों के छिद्रों को खोल दिया जाता है। अब छपाई वाले वस्त्र को एक गद्देदार मेज़ पर फैला दिया जाता है। इस मेज़ पर एक तेलयुक्त कपड़ा बिछाया होता है। इसके पश्चात् छपाई किए जाने वाले वस्त्र पर, लकड़ी के फ्रेम को, स्क्रीन समेत रख दिया जाता है। लेई के रूप में घुले रंग को इसकी सतह पर फैलाया जाता है तथा हल्का सा दबाव देकर सूखने के लिए रख दिया जाता है। कपड़े पर स्क्रीन के खुले छिद्रों वाले स्थान पर रंग चढ़ जाता है। एक से अधिक रंगों में छपाई करनी हो तो अलग-अलग स्क्रीन्स का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि एक स्क्रीन का प्रयोग केवल एक रंग के लिए ही किया जाता है। दूसरे रंग का प्रयोग करने से पहले पहला रंग सुखा देना चाहिए। इसके पश्चात् दूसरे फ्रेम, जिस पर दूसरे रंग के लिए छिद्र खुले होते हैं, का प्रयोग दूसरे रंग के साथ करना चाहिए। यह प्रक्रिया तब तक दोहरानी चाहिए, जब तक डिज़ाइन पूरा नहीं हो जाता है। यह विधि भी काफी मँहगी होती है तथा इसमें भी काफी समय लगता है।

मशीनों द्वारा छपाई : मशीनों द्वारा छपाई मुख्यत: निम्नलिखित तीन प्रकार से की जाती है :

1. **रोलर छपाई :** रोलर छपाई का विकास सन् 1785 में हुआ। इस विधि से कई मीटर लम्बा कपड़ा कुछ ही घन्टों में आसानी से प्रिंट किया जा सकता है। हाथ की छपाई की तुलना में इस छपाई में बहुत कम खर्च आता है, क्योंकि सारा काम मशीनों के द्वारा होता हैं। इसके लिए बहुत कम कारीगरों की आवश्यकता पड़ती है।

रोलर छपाई में ताँबे के कुछ रोलर लिए जाते हैं, जिनकी चौड़ाई वस्त्र की चौड़ाई के बराबर होती है। इन पर डिज़ाइन खुदा हुआ होता है। रोलर्स पर डिज़ाइन खोदना कड़ी मेहनत तथा ध्यान से करने वाला काम है। प्रारम्भ में यह नमूना कारीगर हाथ से खोदते थे। सन् 1801 में स्टील पाइन्ट द्वारा रोलर्स पर डिज़ाइन खोदा जाने लगा। आजकल यह काम मशीन के द्वारा किया जाने लगा है, इसलिए काफी आसान हो गया है। रोलर्स की संख्या प्रयोग किए जाने वाले रंगों की संख्या पर निर्भर करती है। एक रोलर के द्वारा केवल एक रंग की ही छपाई हो सकती है।

रोलर प्रिंटिंग की मशीन में एक बड़ा केन्द्रीय रोलर होता है, जिसके नीचे से छापा जाने वाला वस्त्र लगातार गुज़रता है। केन्द्रीय रोलर गतिशील वस्त्र के साथ-साथ घूमता रहता है तथा थान पर बार-बार छपाई करता जाता है। छपाई के लिए रोलर को रंग के लेप में से निकाला जाता है। एक ब्लेड की सहायता से रोलर पर लगा फालतू रंग उतारा जाता है। अब कपड़े को डिज़ाइन वाले रोलर तथा रबड़युक्त ब्लैंकेट में लगे एक अन्य रोलर के बीच में से गुज़ारा जाता है। रंग के लेप की सहायता से रोलर पर उभरा हुआ नमूना वस्त्र पर छप जाता है। जितने रंगों से छपाई करनी हो, उतने ही रोलर प्रयुक्त किए जाते हैं। ये सभी रोलर केन्द्रीय रोलर के इर्द-गिर्द घूमते हैं। रबड़युक्त कम्बल साफ छपाई के लिए एक अच्छी सतह प्रदान करता है। रोलर छपाई का एक डिज़ाइन छापने के लिए, अधिक से अधिक चौदह रोलर्स का प्रयोग किया जा सकता है, इसलिए इस मशीन में चौदह रंग के नमूने बनाए जा सकते हैं। इस प्रकार की छपाई में डिज़ाइन कपड़े के एक ही तरफा छपता है। यदि वस्त्र के दोनों तरफ छपाई करनी हो, तो इसी प्रक्रिया को दूसरी तरफ दोहरा लेते हैं।

2. **डिस्चार्ज अथवा रंग उतारने वाली छपाई :** इस विधि में कपड़े को पहले किसी भी प्रचलित विधि से गहरे रंग की पृष्ठभूमि में रंग लिया जाता है। फिर रोलर पर बने डिज़ाइन पर, रंग उतारने वाले रसायन जैसे कि ज़िंक ऑक्साइड का पेस्ट लगाया जाता है। अब गहरी पृष्ठभूमि वाले वस्त्र को रोलर के बीच में से निकाला जाता है। रोलर पर लगे रंगकाट के द्वारा डिज़ाइन वाले स्थान पर कपड़े का रंग सफेद हो जाता है। इस प्रकार गहरे रंग के वस्त्रों पर सफेद, क्रीम या पीले रंग के डिज़ाइन बन जाते हैं। अब भाप के द्वारा वस्त्र को सुखा लेते हैं। वस्त्र जब सूख जाता है, तो उसे साफ पानी से अच्छी तरह से धोया जाता है। इससे वस्त्र में से ब्लीच पूरी तरह से निकल जाती है। इस विधि के द्वारा प्राय: गहरे रंग पर छोटी-छोटी बिन्दियाँ अथवा पोल्का डॉट्स बनाई जाती हैं।

डिस्चार्ज छपाई सूती, रेयॉन या कुछ प्रकार के रेशमी वस्त्रों पर की जाती है, किन्तु रंग उतारने वाले रसायनों के प्रयोग से वस्त्र कमज़ोर हो जाता है। इसलिए इस विधि का प्रचलन कम होता जा रहा है।

3. **अवरोधक छपाई :** यह प्रक्रिया डिस्चार्ज छपाई के विपरीत होती है। इस विधि में रोलर पर डिज़ाइन खुदा होता है। डिज़ाइन के अनुसार, जिन स्थानों पर रंग की आवश्यकता नहीं होती, उन स्थानों पर अवरोधक पदार्थ जैसे मोम, गोंद आदि लगा देते हैं। फिर कपड़े को रोलर्स में से निकाला जाता है। जिन स्थानों पर अवरोधक पदार्थ लगा होता है, उन स्थानों पर रंग नहीं चढ़ता। रंगने के पश्चात् कपड़े को सुखाया जाता है। सूखने के पश्चात् इसे धोया जाता है, ताकि फालतू रंग निकल जाए। बाद में अवरोधक पदार्थ हटा दिया जाता है। नमूने में एक से अधिक रंगों का प्रयोग भी किया जा सकता है।

4. **वर्णक/पिगमैंट छपाई :** यह विधि अमरीका में प्रारम्भ हुई तथा इसे एरीडाई विधि भी कहा जाता है। इसमें वर्णक पिगमैंट रंगों का प्रयोग किया जाता है, जो कि जल में अघुलनशील होते हैं। ये प्रकाश, प्रैस तथा अन्य प्रतिकूल प्रभावों के प्रति पक्के होते हैं। इन वर्णकों को विभिन्न तत्वों, विशेष तौर पर जिन का प्रयोग करके, छपाई को रंगीन पेस्ट में बनाया जाता है। रेज़िन छपे हुए वस्त्रों पर रंग बाँधने का कार्य करता है। वस्त्र पर छपाई करने के लिए रोलर अथवा सक्रीन छपाई जैसे विधियों का प्रयोग किया जाता है। वस्त्र पर वर्णक को बाँधने के लिए वस्त्र को गर्म किया जाता है।

5. **डुप्लैक्स प्रिंटिंग :** इस विधि में कपड़े के दोनों तरफ डिज़ाइन दिखाई देता है। ये डिज़ाइन देखने ऐसे लगते हैं, जैसे कि वस्त्र की बुनाई में ही बुने गए हों। इसके लिए वस्त्र को दो रोलर्स में से निकाला जाता है। पहले रोलर के द्वारा कपड़े के एक तरफ डिज़ाइन छप जाता है। फिर दूसरे रोलर के द्वारा दूसरी तरफ छप जाता है। किन्तु इस प्रकार की प्रिंटिंग में रोलर की सैटिंग बहुत ध्यान से करनी पड़ती है। थोड़ी सी गलती होने से भी पूरा डिज़ाइन गलत हो जाता है। *

बायोगैसः अपशिष्ट से ऊर्जा

✍ पवन कुमार[1], राज कुमार[2] एवं नरेन्द्र कुमार
मृदा एवं जल अभियांत्रिकी
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बायोगैस एक गैसों का मिश्रण है जो कि कार्बनिक पदार्थों के हवा की अनुपस्थिति में टूटने से उत्पन्न होती है, इसमें मुख्य रूप से मीथेन और कार्बन डाइऑक्साइड होती है। बायोगैस का उत्पादन करने के लिए कृषि अपशिष्ट, खाद, नगरपालिका अपशिष्ट, पौध सामग्री, सीवेज, हरे कचरे या खाद्य अपशिष्ट को कच्चे माल के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

बायोगैस के गुण: बायोगैस विभिन्न घटकों का मिश्रण है जिसकी संरचना फीड सामग्री, गिरावट की मात्रा आदि की विशेषताओं पर निर्भर करती है। बायोगैस में मुख्य रूप से 50 से 70 प्रतिशत मिथेन, 30 से 40 प्रतिशत कार्बन डाइऑक्साइड और कुछ अन्य गैसें होती हैं। मिथेन एक दहनशील गैस है। बायोगैस की ऊर्जा सामग्री इसमें शामिल मिथेन की मात्रा पर निर्भर करती है।

बायोगैस संयंत्र और उसके घटक: जैविक सामग्री के अवायवीय पाचन को पूरा करने के लिए तैयार की गई एक शारीरिक संरचना को ''बायोगैस संयंत्र'' कहा जाता है। बायोगैस संयंत्रों के घटक निम्नलिखित हैं :

- **मिक्सिंग टैंक:** गाय के गोबर को शेड से इकट्ठा किया जाता है और पानी में समान अनुपात (1:1) के साथ मिलाकर मिक्सिंग टैंक में एक समरूप मिश्रण (घोल) बनाया जाता है।
- **फीड इनलेट पाइप या टैंक:** इस इनलेट पाइप (केवीआईसीबायोगैस प्लांट) या टैंक (जनता बायोगैस प्लांट) के माध्यम से समरूप घोल को डाइजेस्टर में जाने दिया जाता है।
- **डाइजेस्टर :** खिलाया हुआ घोल डाइजेस्टर के अंदर भेजा जाता है, जहां सूक्ष्मजीवों की मदद से अवायवीय किण्वन किया जाता है।
- **गैस धारक :** अवायवीय किण्वन के परिणामस्वरूप, उत्पादित गैस को गैस धारक (केवीआईसी के मामले में ड्रम में और गुंबद में तय गुंबद बायोगैस पौधों के मामले में) में संग्रहीत किया जाता है।
- **स्लरी आउटलेट टैंक या पाइप:** डाइजेस्ट स्लरी को डाइजेस्टर से स्लरी आउटलेट पाइप (केवीआईसीबायोगैस प्लांट्स) या टैंक (जनता बायोगैस प्लांट्स) के माध्यम से निकलने दिया जाता है।
- **गैस आउटलेट पाइप :** गैस धारक के शीर्ष पर मौजूद गैस आउटलेट पाइप के माध्यम से संग्रहीत गैस को जारी और संप्रेषित किया जाता है।

बायोगैस उत्पादन का सूक्ष्म जीव विज्ञान : अवायवीय स्थिति के तहत जैविक सामग्री से बायोगैस के उत्पादन में सूक्ष्मजीवी प्रतिक्रियाओं का अनुक्रम शामिल है। इस प्रक्रिया के दौरान बायोमास में मौजूद जटिल कार्बनिक अणु, अम्ल पैदा करने वाले बैक्टीरिया द्वारा चीनी, शराब, कीटनाशक और अमीनो एसिड में टूट जाते हैं। परिणामी उत्पादों को तब बैक्टीरिया की एक अन्य श्रेणी द्वारा मीथेन का उत्पादन करने के लिए उपयोग किया जाता है। बायोगैस उत्पादन प्रक्रिया में तीन चरण मुख्यत: शामिल हैं :

- हाइड्रोलिसिस
- एसिड गठन और
- मीथेन का निर्माण

हर चरण में कार्बनिक पदार्थों के क्षरण की प्रक्रिया, बैक्टीरिया द्वारा की जाती है, जो कि मध्यवर्ती उत्पादों को तोड़ने में विशेष होते हैं। पाचन की दक्षता इस पर निर्भर करती है कि इन तीन चरणों में पाचन कितनी दूर होता है। बेहतर पाचन मतलब कमअवधारण समय और कुशल गैस उत्पादन ।

हाइड्रोलिसिस : सेल्यूलोसिक बायोमास में पाए जाने वाले जटिल कार्बनिक अणु जैसे कि वसा, स्टार्च और प्रोटीन जो पानी में अघुलनशील होते हैं, बैक्टीरिया द्वारा स्रावित एंजाइम की मदद से सरल यौगिकों में टूट जाते हैं। इस चरण को पोलीमर टूटने की अवस्था (पोलीमर से मोनोमर) के रूप में भी जाना जाता है। प्रमुख अंत उत्पाद ग्लूकोज़ है जो एक साधारण उत्पाद है।

एसिड का निर्माण : हाइड्रोलिसिस चरण में प्राप्त परिणामी उत्पाद (मोनोमर्स) एसिड गठन चरण बैक्टीरिया के लिए इनपुट के रूप में काम करता है। पिछले चरण में उत्पादित उत्पादों को विभिन्न एसिड बनाने के लिए अवायवीय स्थितियों के तहत किण्वित किया जाता है। इस चरण के अंत में उत्पादित प्रमुख उत्पाद एसिटिक एसिड, प्रोपियोनिक एसिड, ब्यूटिरिक एसिड और इथेनॉल हैं।

मीथेन का निर्माण : पिछले चरणों में उत्पादित एसिटिक एसिड, सूक्ष्मजीवों के एक समूह द्वारा मीथेन और कार्बन डाइऑक्साइड में परिवर्तित हो जाता है जिसे ''मेथनोजनस'' कहा जाता है। दूसरे शब्दों में, यह मेथनोजनस द्वारा मीथेन के उत्पादन की प्रक्रिया है। वे अनिवार्य अवायवीय हैं और पर्यावरण परिवर्तनों के प्रति बहुत संवेदनशील हैं। मेथनोजनस पूर्ववर्ती चरणों के मध्यवर्ती उत्पादों का उपयोग करते हैं और उन्हें मीथेन, कार्बन डाइऑक्साइड और पानी में परिवर्तित करते हैं। यह ये घटक हैं जो सिस्टम से उत्सर्जित बायोगैस के अधिकांश भाग को बनाते हैं। मेथानोजेनेसिस पीएच 6.5 और पीएच 8 के बीच होता है, यह उच्च और निम्न दोनों पीएच के लिए संवेदनशील है।

बायोगैस प्लांट में गीले जैविक कचरे से स्वच्छ ईंधन का उत्पादन करने की बहुत अधिक संभावना है। कई ग्रामीण और बाहरी-शहरी क्षेत्र हैं जहां पारंपरिक गोबर आधारित संयंत्रों का उपयोग किया जा सकता है। कस्बों और शहरों में और भी अधिक संभावनाएं हो सकती हैं, जहां कचरा निपटान और स्वच्छता एक बढ़ती चुनौती बनती जा रही है क्योंकि लोगों का शहरी क्षेत्रों में बढ़ते जाना एक समस्या बन रही है। बिजली उत्पादन के लिए और गैस ग्रिड की आपूर्ति के लिए बड़े संयंत्रों के उपयोग में भी रुचि बढ़ रही है।

लाभ :

- बायोगैस संयंत्र अवायवीय पाचन पर निर्भर करते हैं, एक किण्वन प्रक्रिया जिसमें मीथेन गैस (बायोगैस) का उत्पादन करने के लिए अपशिष्ट को सूक्ष्मजीवों द्वारा पचाया जाता है। कचरे को बायोफर्टिलाइज़र में परिवर्तित किया जा सकता है और सीधे खेतों में

[1]विस्तार शिक्षा विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।
[2]सस्य विज्ञान विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

प्रयोग किया जा सकता है या बायोगैस को ईंधन के रूप में प्राकृतिक गैस के साथ परस्पर उपयोग किया जा सकता है।

- सेट-अप की कम लागत और अपशिष्ट पदार्थों की उपलब्धता के कारण बायोगैस ग्रामीण या गरीब क्षेत्रों में विशेष रूप से उपयोगी हो सकती है। प्रक्रिया में लगभग किसी भी जैविक कचरे का उपयोग किया जा सकता है।
- यह इस तथ्य के कारण एक अक्षय ऊर्जा विकल्प के रूप में उद्धृत किया गया है कि यह शून्य-उत्सर्जन प्रक्रिया है। बायोगैस संयंत्र मीथेन उत्सर्जन पर कब्ज़ा करके, ग्रीनहाऊस प्रभाव को रोकने और वातावरण में फैली हानिकारक गैसों की मात्रा को कम करने के काम आते हैं।
- इसके अतिरिक्त, बायोगैस प्राकृतिक सामग्रियों पर निर्भर करती है जिन्हें दोहराया या पुन: उत्पन्न किया जा सकता है, इस प्रकार यह एक स्थायी पद्धति है।

बायोगैस का उपोत्पाद, समृद्ध कार्बनिक पदार्थ होता है, जो रासायनिक उर्वरकों के लिए एक सही पूरक है, या इसके विकल्प हैं, जो अक्सर विषाक्त और हानिकारक प्रभाव डालते हैं। इसके विपरीत, जैविक पदार्थ पौधों की वृद्धि और रोगों के प्रति प्रतिरोधकता बढ़ा सकता है।

नुकसान :

- इसकी लागत अधिक है, क्योंकि लागत स्टील और सीमेंट पर निर्भर है।
- हीट गैस धारक की-मेटल के माध्यम से खो जाती है।
- स्थान की नमी के आधार पर, साल में एक या दो बार गशॉल्डर को पेंटिंग की आवश्यकता होती है।
- लचीले पाइप जोकि गशॉल्डर को मुख्य गैस पाइप से जोड़ता है, को रख रखाव की आवश्यकता होती है, क्योंकि सूर्य में पराबैंगनी किरणें इसे नुकसान पहुंचाती हैं।

निष्कर्ष

1. बायोगैस आधारित ऊर्जा ग्रामीण क्षेत्रों के लिए स्थायी समाधान प्रदान कर सकती है।
2. जैसा कि अर्थशास्त्र आकर्षक है, यह एक गुणा और स्केलेबल मॉडल बन जाता है।
3. ऊर्जा की आपूर्ति ग्रामीण व्यवसायों और उद्यमों को बढ़ने और समृद्ध करने में मदद करेगी।
4. जैविक उर्वरकों के उत्पादन और उपयोग से मिट्टी में सुधार होगा और पैदावार बढ़ेगी।
5. इस तरह की परियोजनाओं के माध्यम से सब्सिडी बिल और विदेशी मुद्रा बहिर्वाह में उल्लेखनीय बचत हासिल की जा सकती है।
6. यह परियोजना स्थानीय रोज़गार के अवसर पैदा करके रोज़गार सृजन में मदद करेगी।
7. ईंधन और ऊर्जा की उपलब्धता के माध्यम से, क्षेत्र में समग्र स्वास्थ्य और स्वच्छता में सुधार होगा। *

प्रीडायबिटीज़ : कारण, लक्षण व उपचार

✍ **उर्वशी नांदल एंव मन्जू गुप्ता**
खाद्य एंव पोषण विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

डायबिटीज़ यानि मधुमेह के बारे में तो सब जानते हैं लेकिन प्रीडायबिटीज़ के बारे में भी जान लेना बहुत आवश्यक है, क्योंकि यदि किसी व्यक्ति में प्रीडायबिटीज़ का समय रहते पता चल जाए और इसका इलाज कर दिया जाए तो प्रीडायबिटीज़ और इसके जानलेवा खतरों से बचा जा सकता है। प्रीडायबिटीज़ का अर्थ है डायबिटीज़ से पहले की अवस्था यानी मधुमेह की शुरुआती अवस्था है प्रीडायबिटीज़। इसमें खून में शूगर की मात्रा तो बढ़ती है लेकिन इतनी अधिक भी नहीं बढ़ती कि कोई लक्षण दिखाई दें। प्रीडायबिटीज़ को बार्डर लाइन प्रीडायबिटीज़ भी कहा जाता है। डाक्टर आमतौर पर खून की जाँच से प्रीडायबिटीज़ का पता लगाते हैं। फास्टिंग ब्लड ग्लूकोज़ की जाँच सुबह खाली पेट होती है। वहीं ओरल ग्लूकोज़ टोलरेंस टेस्ट सुबह नाश्ते के दो घंटे बाद करते हैं। डॉक्टर ए 1 सी टेस्ट का भी उपयोग कर सकते हैं। इसमें 2-3 महीनों में औसत ब्लड शूगर के स्तर को मापना शामिल है।

प्रीडायबिटीज़ के लिए मापदंड :

- फास्टिंग ब्लड शूगर लेवल 100-126 मि.ग्रा./डी.एल होना चाहिए
- ग्लूकोज़ टोलरेंस का स्तर 140-200मि.ग्रा./डी.एल होना चाहिए
- ए 1 सी टेस्ट का परिणाम 5.0-6.4 प्रतिशत होना चाहिए

प्रीडायबिटीज़ का टेस्ट किन्हें करवाना चाहिए :

- 45 वर्ष या उससे अधिक आयु वालों को।
- मोटापा या अधिक वज़न या 23 से अधिक बी.एम.आई. होने पर।
- कमर की चौड़ाई पुरुषों में 40 इंच या महिलाओं में 35 इंच से अधिक होने पर।
- परिवार में किसी को डायबिटीज़ है या पहले थी।
- उच्च रक्तचाप व तनाव के मरीज़ को।
- गर्भावस्था के परिणामस्वरूप गर्भकालीन डायबिटीज़।
- 9 पाउंड से अधिक वज़न के शिशु को जन्म देने पर।

प्रीडायबिटीज़ के लक्षण : हालांकि प्रीडायबिटीज़ के अधिकतर मरीज़ों में लक्षण नज़र नहीं आते, लेकिन कुछ लक्षणों से इसका अंदाज़ा लगाया जा सकता है जैसे :

- अधिक प्यास लगाना
- थोड़ी-थोड़ी देर में पेशाब आना
- जल्दी थकान महसूस होना
- बेहोशी होना
- धुंधला दिखाई देना
- त्वचा पर धब्बे बन जाना
- नींद में परेशानी होना

प्रीडायबिटीज़ से बचाव के उपाय: यदि इस समय बचाव के रास्तों को अपनाया जाए तो बीमारी को आगे बढने से रोका जा सकता है। जीवनशैली में बदलाव व संतुलित खानपान से 80% तक ब्लड शूगर कंट्रोल हो जाता है।

- वज़न नियंत्रित होना चाहिए। यदि आप अपना वज़न 5 से 10% तक भी घटा लेते हैं तो इससे आपके स्वास्थ्य पर काफी सकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।
- आपका खानपान स्वस्थ्य होना चाहिए। शरीर में अधिक सोडियम की मात्रा होने से रक्तचाप बढ़ जाता है। भोजन में सोडियम की मात्रा कम करें। नमकीन चीजें जैसे भुजिया, अचार, पापड़ से पूरी तरह से परहेज़ करें।
- यदि आपको हाई कोलेस्ट्रॉल या हाई ब्लड प्रैशर है तो उसे भी नियंत्रण में रखें।
- प्रीडायबिटीज़ से बचने के लिए रोज़ाना कम से कम 30 मिनट तक व्यायाम करने का नियम अवश्य बनाएँ। योग/ध्यान/प्राणायाम को अपनी नियमित दिनचर्या में शामिल करें।
- भोजन में पोटाशियम युक्त चीजें बढ़ा दें। डिब्बाबंद सामाग्री का प्रयोग न करें।
- अपनी दैनिक कैलोरी और वसा पर कंट्रोल रखें।
- समय-समय पर जाँच करवाते रहें।
- फल और सब्जी का सेवन बढ़ाएं। फाइबर (रेशे) वाली चीज़ें जैसे फलों के छिलके, हरी पत्तेदार सब्जियाँ, चोकर युक्त आटा, साबुत अनाज व दालें इत्यादि का सेवन बढ़ा दें।

इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए खाघ एवं पोषण विभाग में अखिल भारतीय समन्वित परियोजना के तहत मिश्रित अनाज से एक आटा तैयार किया गया है जिसमें गेहूँ का आटा, ज्वार का आटा तथा साबुत काले चने का आटा निर्धारित मात्रा में मिलाया गया है। गेहूं, ज्वार और काला चना तीनों ही डायबिटीज़ के मरीज़ों के लिए उत्तम माने गए हैं क्योंकि खाने के बाद ये जल्दी से रक्त में शूगर की मात्रा बढ़ने नहीं देते तथा काले चने में ग्लूकोज़ कम करने की क्षमता होती है। इसमे फाइबर तथा प्रोटीन की मात्रा भी अधिक होती है जो भूख को नियंत्रित करके वज़न घटाने में सहायक होता है। इस मिश्रित आटे से हम रोटी या चीला बना सकते हैं जिन्हें बनाने की विधि यहाँ दी जा रही है।

मिश्रित आटा रोटी

सामग्री : गेहूँ का आटा - 30 ग्रा., ज्वार का आटा - 30 ग्रा., काले चने का आटा - 40 ग्रा., नमक - स्वादानुसार

विधि:

- सभी सामाग्री को एक बर्तन में डालकर अच्छी तरह मिला लें।
- थोड़ा-थोड़ा पानी डालकर आटा गूँथ लें और आटे को 15-20 मिनट तक ढक कर रख दें।
- तवा गरम करें।
- गूँथे हुए आटे से एक लोई लें और गोल रोटी बना लें।
- रोटी को गरम तवे पर डालें और दोनों तरफ से रोटी सेंक लें।
- गरम रोटी परोसें।

पोषकमान (प्रति 100 ग्रा.) : प्रोटीन - 14.63 ग्रा., वसा - 3.42 ग्रा., ऊर्जा - 277.82 कि. कैलोरी, रेशा - 2.27 ग्रा., लोहा - 3.88 मि.ग्रा.

मिश्रित आटा चीला

सामग्री : गेहूँ का आटा - 30 ग्रा., ज्वार का आटा - 30 ग्रा., काले चने का आटा - 40 ग्रा., नमक - स्वादानुसार, टमाटर, प्याज़, हरी मिर्च - बारीक कटे हुए, हरा धनिया

विधि :

- सभी प्रकार के आटे व नमक को एक बर्तन में मिला लें।
- थोड़ा-थोड़ा पानी डालकर घोल बना लें।
- तवा गरम करें, हल्का सा चिकना करें।
- गरम तवे पर एक कड़छी घोल डालें तथा गोल आकार में फैला दें। किनारों पर थोड़ा सा घी डालें।
- मध्यम आँच पर दोनों तरफ से सेकें।
- प्लेट में निकाल कर परोसें।

नोट : इसमें थोड़ा सा बारीक कटा टमाटर, प्याज़, हरा धनिया तथा हरी मिर्च ऊपर से भी सजा सकते हैं और घोल में भी मिला सकते हैं।

पोषकमान (प्रति 100 ग्रा.) : प्रोटीन - 14.35 ग्रा., वसा - 5.86 ग्रा., ऊर्जा - 178.98 कि. कैलोरी, रेशा - 2.24 ग्रा., लोहा -3.89 मि.ग्रा. *

आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक नि:शुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह नि:शुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह नि:शुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

कृषि कौशल में असीम सम्भावनाएं

✍ **सूर्यपाल सिंह[1], हर्षिता सिंह एवं सज्जन सिंह[2]**
आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

वैश्विक विपदा कोविड-19 ने विकास की गति को लगभग रोक दिया है। लॉकडाउन के कारण से लोग अपने घरों तक सीमित रह गए हैं। मज़दूर भय के कारण अपने पैतृक स्थानों की ओर पलायन कर रहे हैं। कृषि क्षेत्र ही नहीं अपितु सभी व्यावसायिक संस्थाएं ठप्प पड़ी हैं। देश की 135 करोड़ आबादी की खाद्य सुरक्षा का उत्तरदायित्व कृषि व किसानों पर है यही कारण है जब सभी गतिविधियां बन्द हैं कृषि और कृषि कार्य यथावत चल रहा है। कृषि के क्षेत्र में कार्यरत मानव संसाधन में शिक्षा के अभाव में बहुत सारी कौशल क्षमताओं की कमी है।

आधुनिक खेती के बदलते स्वरूप में कृषि कौशल प्राप्त पेशेवर लोगों की भारी कमी है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की एक अध्ययन रिपोर्ट के अनुसार देश में 18.5 प्रतिशत ही खेतीहर मज़दूर हैं जिसमें मात्र 0.5 प्रतिशत तकनीकी रूप से प्रशिक्षित हैं। इसी रिपोर्ट पर काम करते हुए भारत सरकार ने कृषि कौशल परिषद का गठन किया है। जो कृषि के क्षेत्र में प्रशिक्षित मानव संसाधन की मांग व पूर्ति के इस अन्तर को कम करने में अपना योगदान देगी। कृषि कौशल परिषद के माध्यम से देश के सभी प्रदेशों में कृषि विज्ञान केन्द्र, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की अनुसंधान संस्थाओं के माध्यम से विषय विशेष में कौशल प्रशिक्षण देकर प्रशिक्षित पेशेवरों को तैयार किया जा रहा है जो आधुनिक खेती में अपना अहम योगदान देंगे। किसान परम्परागत खेती से हटकर आधुनिक खेती की ओर अग्रसर हैं। भारतीय कृषि के परिपेक्ष्य में जहां 55 प्रतिशत लोग कृषि या कृषि आधारित कार्य परम्परागत खेती में भले ही कुशल हों, आधुनिक खेती में पिछड़े हुए हैं। कम होती जोत में परम्परागत खेती लाभकारी नहीं हो सकती। खेती का स्वरूप बदलने की आवश्यकता है। कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए कृषि विश्वविद्यालयों व शोध सस्थानों द्वारा विकसित तकनीकों को किसान तक पहुंचाना अनिवार्य है। हमारे देश में कृषि को एक ऐसे व्यवसाय के रूप में पहचाना जाता है जिसमें अधिक शिक्षित व प्रशिक्षित लोग नहीं हैं। यद्यपि देश में रोज़गार के सबसे अधिक अवसर सृजन करने वाला क्षेत्र भी कृषि ही है फिर भी इसके महत्व पर ध्यान आकर्षण पर्याप्त मात्रा में नहीं हुआ। डोलती अर्थव्यवस्था का कृषि ही सहारा है। बदलते स्वरूप ने कृषि के महत्व को बढ़ा दिया है। आज खेती-बाड़ी में मिट्टी की जांच सूक्ष्म सिंचाई, उन्नत बीज, जैविक खाद, कीटनाशक एवं एग्रो मशीनरी का प्रयोग सामान्य है। इन सभी के बारे में ज्ञान केवल कौशल विकास के माध्यम से अर्जित किया जा सकता है। खेती बाड़ी को लाभकारी बनाने के लिए कृषि उद्यमिता का ज्ञान होना भी आवश्यक है। खेती से जुड़े विभिन्न उद्यमों को आगे बढ़ाने के लिए सरकार समय-समय पर बहुत-सी छूट देती है। लेकिन ज्ञान के अभाव में किसान उनका फायदा नहीं उठा पाते जिसके लिए प्रशिक्षित मानव संसाधन की बहुत आवश्यकता है।

[1]अतिथि संकाय, श्री विश्वकर्मा कौशल विश्वविद्यालय, दुधौला (पलवल)।
[2]केन्द्रीय भैंस अनुसधान संस्थान, हिसार।

भगवान विश्वकर्मा ने भगवान कृष्ण द्वारा प्रतिपादित निष्काम कर्म के दर्शन को श्रम, शिल्प एवं तकनीकी कौशल से जोड़ते हुए सम्पूर्ण विश्व का सफल निर्माण किया है। देश के विकास में कुशल कामगार एवं श्रमिक का महत्वपूर्ण योगदान है। इसी का संज्ञान लेते हुए हरियाणा सरकार ने भी श्री विश्वकर्मा कौशल विश्वविद्यालय की स्थापना दुधौला, पलवल हरियाणा में की जिसमें विभिन्न प्रकार के कौशल पाठ्यक्रम शुरू किये गये जो रोज़गार के अवसर उपलब्ध कराने के साथ-साथ उद्योगों के लिए कार्यस्थल प्रशिक्षण (OJT) के लिए समझौता ज्ञापन तैयार विद्यार्थियों को उद्योग की आवश्यकताओं के अनुसार प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करता है। आगामी वर्षों में सुखद परिणामों की प्रतीक्षा है।

भारत सरकार ने विभिन्न क्षेत्रों में कुशल श्रमिकों की कमी को पहचाना और एक अलग से मंत्रालय का गठन किया ताकि युवाओं को कौशल विकास के माध्यम से सशक्त किया जा सके। कौशल प्रशिक्षण के उपरान्त ये युवा अधिक प्रभावी रोज़गार पा सकें जो उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ कार्य स्थल पर एक अच्छा वातावरण भी तैयार कर सकें। इस मंत्रालय के गठन का मूल मन्त्र ''कौशल भारत-कुशल भारत'' है। ''राष्ट्रीय कौशल योग्यता ढांचा'' (NSQF) के तहत उद्योग और सरकार की आवश्यकताओं के अनुसार 40 क्षेत्रों की पहचान कर कौशल विकास की योजना का प्रारूप तैयार किया गया है। 15 जुलाई 2015 को स्वयं माननीय प्रधानमन्त्री जी ने कौशल मिशन का विमोचन किया। कौशल विकास प्रशिक्षण से हमारे युवा अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर स्पर्धात्मक होंगे। जिससें रोज़गार के अवसर प्रदान होंगे। प्रधानमन्त्री कौशल विकास योजना के तहत प्रति वर्ष हज़ारों युवाओं को प्रशिक्षित कर उद्योग जगत की आवश्यकताओं और युवाओं को रोज़गार के लिए तैयार किया जाता है।

राष्ट्रीय कौशल विकास कॉरपोरेशन (NSDC) के तहत 39 सैक्टर स्किल काउंसिल्स (SSC) का गठन किया गया। जिसमें 37 अभी कार्यशील हैं। इन काउंसिल्स के माध्यम से अनेकों क्षेत्रों में प्रशिक्षक तैयार कर उनके द्वारा प्रशिक्षित युवाओं को प्रत्येक क्षेत्र में एक बहुत बड़ी फौज तैयार की गयी है। कृषि के क्षेत्र में भारतीय कृषि कौशल परिषद का गठन किया गया जो कौशल विकास और उद्यमिता मन्त्रालय के तत्वावधान में कार्य करती है। यह परिषद कृषि के संगठित और असंगठित क्षेत्र में कार्यरत किसानों मज़दूरों स्वनियोजित एवं विस्तार श्रमिकों को कौशल विकास द्वारा क्षमता निर्माण की दिशा में काम करता है। कृषि के क्षेत्र में रुकी हुई वृद्धि को गति देने के लिए कौशल विकास के माध्यम से यह कृषि परिषद प्रयत्नशील है। अनेक कृषि क्षेत्रों में यह परिषद कार्य कर रही है। जैसे कृषि सूचना प्रबन्धन, डेयरी फार्म प्रबन्धन, पोल्ट्री फार्म प्रबन्धन, मछली पालन, पशुपालन, पोस्ट हार्वेस्ट आपूर्ति श्रृंखला प्रबन्धन, वानिकी और कृषि वानिकी बागवानी, बीज उद्योग, मृदा स्वास्थ्य, कृषि उद्यमिता आदि।

किसान कृषि विज्ञान केन्द्रों व शोध सस्थानों के माध्यम से अपनी रूचि के अनुसार इन उपर्युक्त कृषि क्षेत्र के विषय में कौशल विकास का प्रशिक्षण प्राप्त कर आधुनिक लाभकारी कृषि को अपना स्वरोज़गार का व्यवसाय बना सकते हैं। *

बीज उत्पादन पर कोरोना महामारी के दुष्प्रभाव

✍ **अमित कुमार[1], अक्षय भूकर एवं पुनीत राज एम. एस.**
बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है। इसलिए कृषि के क्षेत्र में लगातार विकास तथा उत्पादन में वृद्धि अत्यन्त आवश्यक है। सभी जानते हैं कि अच्छे बीज, खाद, पानी, भूमि, अनुकूल जलवायु व उचित रोग एवं कीट नियन्त्रण आदि अधिक पैदावार लेने के लिए सभी आवश्यक हैं, परन्तु उपर्युक्त सभी में उन्नत बीज का स्थान सर्वप्रथम एवं अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसलिए बीज का गुणवत्तायुक्त होना अधिक आवश्यक है क्योंकि उन्नत बीज के बिना इनका समुचित लाभ सम्भव नहीं है। हमारे देश में बीज उत्पादन व बिक्री व्यवसाय में अनेक देश-विदेश की सरकारी एवं गैर सरकारी बीज कम्पनियां/संस्थाएं कार्यरत हैं, परन्तु इसके उपरान्त भी बीज-प्रतिस्थापन दर में कुछ खास बढ़ोत्तरी नहीं हो पा रही है।

कोरोना जैसी महामारी के दंश से शायद ही कोई क्षेत्र अछूता रहा हो। जहां एक तरफ पूरे विश्व की उन्नति थम-सी गई, वहीं बीज उत्पादन क्षेत्र पर भी इसके दुष्प्रभाव देखने को मिले हालांकि कृषि को सरकार ने आवश्यक श्रेणी में रखकर कुछ राहत तो प्रदान की लेकिन बीज उत्पादन क्षेत्र भी इसकी मार से बच न सका। मार्च अंत में लॉक डाउन की वजह से श्रमिक उपलब्ध न होने से गेहूं, जौ, चना आदि फसलों में रोगिंग की प्रक्रिया प्रभावित हुई। रोगिंग बीज उत्पादन के दौरान अनुवांशिक शुद्धता को कायम रखने की एक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें दूसरी किस्मों के पौधों, बीमारी वाले पौधों व खरपतवार के पौधों को खेत से निकाला जाता है। बीज की अनुवांशिक शुद्धता को कायम रखने के लिए दो से तीन रोगिंग करनी बहुत आवश्यक हैं। यह कार्य फसल की प्रारंभिक अवस्था से फसल पकने तक चरणबद्ध तरीके से किया जाता है। यदि बीज फसल से अवांछित पौधों को नही निकाला जाता है अथवा रोगिंग नहीं कराई जाती है तो बीज नाम मात्र व्यावसायिक दृष्टिकोण से अनाज प्राप्त होगा। अत: कोरोना की वजह से बीजों की अनुवांशिक शुद्धता में कमी आने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। बीज उत्पादन विभिन्न बीज वर्गों का एक क्रम है।

किसी भी किस्म का शुरुआती बीज जो पूर्ण आनुवांशिक रूप से शुद्ध होता है, नाभिकीय बीज कहलाता है। नाभिकीय बीज से प्रजनक बीज, प्रजनक बीज से आधार बीज तथा आधार बीज से प्रमाणित बीज पैदा किया जाता है। प्रमाणित बीज किसानों को फसल उत्पादन के लिए उपलब्ध करवाया जाता है। कोरोना में लॉक डाउन की वजह से यह बीज शृंखला भी प्रभावित हुई है, एक विशेष वर्ग के बीजों की आपूर्ति बाधित होने की वजह से दूसरे वर्ग के बीज उत्पादन में कमी आएगी। खरीफ फसलों के बीजों का अव्यवस्थित तथा समय पर वितरण न होने से सारे बीज का विक्रय संभव नहीं होगा और परिणामस्वरूप बीज पैदा करने वाली संस्थाओं को नुकसान

(शेष पृष्ठ 27 पर)

[1]सब्जी विज्ञान विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

फल व सब्जी उत्पादन में नीम : एक वरदान

✍ **सुरेंद्र मित्तल, रूपाक्षी एवं काजल[1]**
उद्यान विभाग विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हाल के वर्षों में, फसल प्रणालियों और जलवायु में बदलाव और अत्यधिक इनपुट गहन वाली किस्मों की शुरूआत के साथ कीट स्थिति में एक बदलाव देखा गया है। वनस्पति फसलों के कुछ कीट जिन्हें पहले मामूली कीट माना जाता था वे प्रमुख हो गए हैं और कुछ धीरे-धीरे देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रमुख कीट की स्थिति प्राप्त कर रहे हैं। सिंथेटिक कीटनाशकों के बार-बार उपयोग से कीटों में कीटनाशकों के प्रतिरोध में वृद्धि होती है। सिंथेटिक कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से कीटनाशकों के लिए कीट प्रतिरोध के विकास, कीटों के अन्य प्राकृतिक शत्रुओं को नुकसान, पौधों और मिट्टी पर विषाक्त प्रभाव आदि जैसी समस्याएं हुई हैं। कीटनाशक न केवल पौधों और मिट्टी पर, बल्कि अन्य जीवित जीवों पर भी दुष्प्रभाव डालते हैं इसलिए सिंथेटिक कीटनाशकों से गैर-सिंथेटिक की ओर स्थानांतरण करने की आवश्यकता है।

नीम एक ऐसा पेड़ है जिसका उपयोग एशिया में सदियों से कीटनाशक, फफूंदनाशक, उर्वरक आदि के रूप में किया जाता रहा है। नीम के पेड़ के विभिन्न भाग जैसे छाल, पत्ते, फूल, बीज और फलों के गूदे का उपयोग किया जाता है। हालांकि नीम के पेड़ के सभी भाग जैविक रूप से सक्रिय हैं लेकिन उच्चतम गतिविधि को निम्बोली में देखा जा सकता है। नीम का तेल वास्तव में प्राकृतिक रूप से एक जैविक कीटनाशक है। नीम के तेल को नीम के पेड़ के बीजों से निकाला जाता है और इसमें कीटनाशक और औषधीय गुण होते हैं जिसके कारण इसे कीट नियंत्रण में इस्तेमाल किया गया है। कुछ देशों में नीम की क्षमता को जैव-कीटनाशक के रूप में देखा जाता है, लेकिन कुछ क्षेत्रों में यह अभी भी अधिक प्रयोग नहीं किया जाता। यहां तक कि भारत में केवल 30-35 प्रतिशत निम्बोली का इस्तेमाल होता है।

कृषि में नीम के उपयोग :

1. **फर्टिलाइज़र के रूप में :** निम्बोली से तेल निचोड़ने के बाद बची सामग्री को सीड केक के नाम से जाना जाता है। यह जैव उर्वरक के रूप में कार्य करता है और पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करने में मदद करता है। फसलों की अधिक उपज सुनिश्चित करने के लिए इसका व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। नीम के बीज का केक उर्वरक और कीटनाशक का दोहरा कार्य करता है, मिट्टी के कीट और बैक्टीरिया के विकास को कम करता है, सभी पौधों की वृद्धि और उत्कृष्ट मिट्टी के लिए आवश्यक स्थूल पोषक तत्व प्रदान करता है।

2. **खाद के रूप में :** नीम के पत्तों का उपयोग हरी पत्ती की खाद के रूप में भी किया जाता है क्योंकि यह मिट्टी में नाइट्रोजन और फॉस्फोरस सामग्री को बढ़ाने में मदद करता है। यह सल्फर, पोटेशियम, कैल्शियम, नाइट्रोजन आदि में समृद्ध है। नीम केक का उपयोग उच्च गुणवत्ता वाले जैविक या प्राकृतिक खाद के निर्माण के लिए किया जाता है, जिसका पौधों, मिट्टी और

[1]वानिकी विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

अन्य जीवित जीवों पर कोई असर नहीं पड़ता है। इसका उपयोग सीधे मिट्टी के साथ मिलाकर किया जा सकता है या इसे यूरिया और अन्य जैविक खाद के साथ सर्वोत्तम परिणामों के लिए मिश्रित किया जा सकता है। नियमित अंतराल पर 28 दिनों की अवधि में बगीचे की मिट्टी में नीम के अर्क से नाइट्रोजन फिक्सर की आबादी में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। यह सभी मैक्रो और सूक्ष्म पोषक तत्वों को प्रदान करके मिट्टी और पौधों को पोषण देता है, फसलों की उपज को बढ़ाता है, उर्वरक के उपयोग को कम करने में मदद करता है और इस प्रकार पौधों की लागत को कम करने में मदद करता है।

3. यूरिया कोटिंग एजेंट के रूप में : मिट्टी की उर्वरता को सुधारने और बनाए रखने के लिए यूरिया कोटिंग एजेंट के निर्माण के लिए नीम और उसके भागों का उपयोग किया जा रहा है। नीम यूरिया कोटिंग एजेंट का उपयोग मिट्टी के बैक्टीरिया की गतिविधि और विकास को मंद करने में मदद करता है। यह मिट्टी में यूरिया के नुकसान को रोकता है। यह बड़ी संख्या में कीटों को नियंत्रित करने के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है जैसे कि सूण्डी, भूंडी, लीफहॉपर्स, छेदक, अष्टपदी कीट आदि। यूरिया कोटिंग आमतौर पर या तो तरल रूप में या पाऊडर के रूप में उपलब्ध है।

4. मृदा कंडीशनर के रूप में : नीम के बीज के दानों या पीसे हुए बीजों का उपयोग मृदा कंडीशनर के निर्माण के लिए किया जाता है जो मृदा को पोषण प्रदान करने में मदद करता है। इसे पौधों की बुवाई के समय लगाया जा सकता है या मिट्टी में छिड़का जा सकता है। छिड़काव की प्रक्रिया को उचित सिंचाई के बाद किया जाना चाहिए ताकि उत्पाद जड़ों तक पहुंच जाए। भारत जैसे देशों में जैविक मिट्टी कंडीशनर कृषि उद्योग में लोकप्रियता प्राप्त कर रहा है। नीम एक प्राकृतिक मिट्टी कंडीशनर है जो मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार करने में मदद करता है, जिससे पौधों और फलों की वृद्धि होती है। यह न केवल पौधों को बढ़ने में मदद करता है, बल्कि उन्हें कुछ कीटों द्वारा नष्ट होने से भी रोकता है।

5. फ्यूमिगैंट के रूप में : नीम के पेड़ का उपयोग घरेलू, भंडारण कीटों और फसल कीटों के खिलाफ किया जाता है। नीम कीट फ्यूमिगेंट गैसीय अवस्था में उपलब्ध है और इसका उपयोग कीटनाशक और कीटाणुनाशक के रूप में किया जाता है। किसानों द्वारा व्यावसायिक आधार पर बड़ी संख्या में इसका उपयोग किया जा रहा है। यह 100% प्राकृतिक उत्पाद निर्यात किया जा रहा है क्योंकि यह गैर विषैले हैं और पर्यावरण को प्रभावित नहीं करते हैं। जैव उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग की बढ़ती प्रवृत्ति के साथ, कीटों और फफूंद आदि के विकास चक्र को रोकने के लिए दुनिया भर में नीम की खेती की जा रही है और उगाया जा रहा है। नीम का तेल और बीज के अर्क कीटाणुनाशक और जीवाणुरोधी हैं जो पौधों को विभिन्न प्रकार के कीटों से बचाने के लिए उपयोगी होते हैं। यह प्राकृतिक उत्पाद पौधों पर कोई अवशेष नहीं छोड़ते और कीट प्रजनन नियंत्रक के रूप में कार्य करते हैं।

6. कीटनाशक और फफूंदनाशक के रूप में : नीम कीटनाशक कीट प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और इसलिए इसका व्यापक रूप से कृषि में उपयोग किया जाता है। भारत में कीटों को भगाने के लिए सूखे नीम के पत्तों को भंडारित अनाज के साथ मिलाकर रखने की एक पुरानी प्रथा रही है। यह एक बहुत प्रभावी फफूंदनाशक भी है। नीम के तेल और बीज के अर्क में कीटाणुनाशक और एंटी-बैक्टीरियल गुण पाए जाते हैं जो पौधों को विभिन्न प्रकार के कीटों से बचाने के लिए उपयोगी होते हैं। इसका उपयोग अन्य कीटनाशकों और तेल के साथ अधिक प्रभावशीलता के लिए किया जा सकता है। नीम उत्पादों को पत्ती छेदक, पत्ती फोल्डर, गॉल मिज, टिड्डी, दरिंदा मकड़ी, काली मक्खी, घर की मक्खी और गुच्छा और साइकिड कैटरपिलर के खिलाफ प्रभावी कीटनाशक पाया गया है। यह सभी फसलों, पेड़ों, पौधों, फूलों, फलों और सब्जियों पर उपयोग के लिए बहुत अच्छा है। नीम केक, नीम के पत्ते (पाऊडर या जलीय अर्क), नीम के तेल और नीम के बीज या गुठली के अर्क को टमाटर, अंगूर, गुलाब और खीरे जैसे कई पौधों पर फफूंद को नियंत्रित करने के लिए पाया गया है। नीम का तेल फलों के पेड़ों को कुछ सामान्य कीड़ों से बचाता है जैसे एप्पल वूली एफिड, लीची का बदबूदार बग, रोज़ लीफहॉपर्स, पादप बग, नाशपाती सिला, स्ट्रॉबेरी का चेपा, सुरंगी कीड़ा, लीफहॉपर्स आदि। फलों के पेड़ों को कीट मुक्त रखने के लिए अपने पौधों पर स्प्रे करें। आग अंगमारी, वर्टिसिलियम विल्ट, नारंगी रतुआ, सफेद चूर्णी रोग और जामुन के अन्य रोगों का इलाज अक्सर नीम के तेल से किया जाता है।

इसके अलावा, नीम का तेल फफूंद को भी नियंत्रित करता है जैसे कि चूर्णी रोग, रतुआ, पत्तों के धब्बों का रोग, जड़ गलन और तना गलन। शाम और फिर सुबह सब्जी के पौधों पर नीम का तेल स्प्रे करें। इन समयों पर छिड़काव करने से यह सुनिश्चित करने में मदद मिलती है कि आप लाभकारी कीटों, जैसे मधुमक्खियों, जो कि पौधों को परागित करने में मदद करती हैं, को कोई नुकसान नहीं पहुंचा रहे हैं। कीटनाशक और फफूंदनाशक दोनों के रूप में नीम के तेल का दोहरा उद्देश्य है। यह उन कीटों पर काम करता है जो अक्सर आपकी सब्जियां खाते हैं, जिनमें टमाटर हॉर्नवर्म, कॉर्न ईयरवर्म, आलू कंद मोथ, चेपा और सफेद मक्खी शामिल हैं।

लाभ :

- नीम आधारित कीटनाशक पौधों पर कोई अवशेष नहीं छोड़ते हैं। इसकी जैविक प्रकृति के कारण इसका पर्यावरण पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है और आप इसका उपयोग लगभग सभी पेड़-पौधों के लिए कर सकते हैं।
- नीम फ्यूमिगेंट्स पर्यावरण के अनुकूल हैं, अन्य सूक्ष्म जीवों को नुकसान नहीं पहुंचाते हैं और स्थलीय और जलीय वातावरण को दूषित नहीं करते हैं।
- कीटों और कीटों की एक विस्तृत श्रृंखला के खिलाफ प्रभावी है। यह इन्सानों पर कोई नकारात्मक प्रभाव नहीं डालते हुए हानिकारक कीड़ों पर हमला करने में सक्षम हैं।
- कीट इसके प्रतिरोध को विकसित नहीं करते हैं।
- नीम आधारित कीटनाशक आसानी से तैयार हो जाते हैं और अत्यधिक प्रभावी होते हैं।

- ये अपेक्षाकृत कम खर्चीले, बायोडिग्रेडेबल और पर्यावरण के अनुकूल हैं।
- नीम कीटनाशक आमतौर पर पानी में घुलनशील होते हैं और पौधों की वृद्धि में मदद करते हैं।
- सिंथेटिक कीटनाशकों के विकल्प के रूप में वर्तमान कृषि की आवश्यकता है ।

बाज़ार में उपलब्ध नीम के उत्पाद : व्यावसायिक रूप से उपलब्ध नीम जैसे अचूक, बायोनीम, निम्बिसिडीन, नीम रीच और नीम अर्क ने फफूंदनाशक सक्रियता दिखाई। कई भारतीय कंपनियां व्यावसायिक रूप से नीम आधारित कीटनाशक निर्माण करते हैं, जैसे कि आरडी-9 व रेपेलिन जो कटवॉर्म के खिलाफ छिड़काव के लिए और निंबोसॉल और बायोसॉल सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए हैं। नीम उपलब्ध सबसे आम उत्पाद हैं नीमिक्स, जो सुरंगी कीड़ा, मिली बग, चेपा, फल मक्खियों, सूण्डी और सिल्ला के खिलाफ प्रभावी हैं और एलाइन, जो कुछ छोटे पत्तों के रोलर्स के खिलाफ सक्रिय हैं। अन्य नीम उत्पाद हैं इको नीम प्लस, नीम गोल्ड, नीम गार्ड, नीमोलिन, जय नीम, नीमअजल-एफ, जवान (नीम आधारित प्राकृतिक कीटनाशक) और डेजोमेट (नीम आधारित प्राकृतिक कीटनाशक)। *

(पृष्ठ 25 का शेष)

उठाना पड़ेगा। बीज प्रमाणीकरण सस्था व बीज उत्पादन संस्थाएं समय-समय पर अपने अनुबंधित बीज उत्पादक किसानों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करती हैं, कोरोना महामारी के चलते इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों को या तो स्थगित करना पड़ा या बंद करना पड़ा। जाहिर है इससे बीज गुणवत्ता में कमी आएगी। श्रमिकों के उपलब्ध न होने से केवल रोगिंग प्रक्रिया ही प्रभावित नहीं हुई बल्कि बीज उत्पादन की अन्य क्रियाओं जैसे-सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण, उर्वरक प्रबन्धन, पौध संरक्षण, कटाई एवं कढ़ाई आदि में भी देरी हुई है जिसके परिणाम स्वरूप बीज उत्पादन और बीज गुणवत्ता दोनों में कमी आएगी।

यातायात बाधित होने की वजह से बीज प्रसंस्करण एवं पैकिंग में हुई देरी की वजह से किसानों को समय पर बीज उपलब्ध नहीं होगा। बहुत से किसान दूर-दराज के गाँवों से आकर वह बीज खरीद के जाते थे। कोरोना के भय व यातायात के साधन न चलने की वजह से अपनी मनपसंद किस्म का बीज नहीं खरीद पाए, परिणामस्वरूप बीज विस्थापन दर में कमी आएगी व उत्पादन भी घटेगा। कोरोना की वजह से कृषि में प्रयोग किए जाने वाली अन्य उत्पादक सामग्री तथा डीज़ल की कीमतों में बढ़ोत्तरी होने की वजह से बीज की कीमतों में भी बढ़ोत्तरी हो सकती है। कृषि शोध द्वारा भी यह प्रमाणित हो चुका है कि केवल साधारण बीज के मुकाबले उन्नत बीज का प्रयोग करने से लगभग 10-20 प्रतिशत तक पैदावार बढ़ाई जा सकती है।

अत: उन्नत बीज उपलब्ध न होने की वजह से कुल उत्पादन में कमी आएगी तथा किसानों की आय भी घटेगी क्योंकि बीज सीधे तौर पर कृषि एवं कृषि अर्थव्यवस्था से जुड़ा है तो ज़ाहिर है कि बीज क्षेत्र पर इस बुरे दौर का असर भविष्य में अर्थव्यवस्था पर भी देखने को मिलेगा। *

गर्मियों में अल्ट्रावायलेट वस्त्रों का महत्व

मोना वर्मा एवं नीलम सैनी
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हमारे देश में इस समय लोग पहले से ही कोरोना के संकट से निरन्तर जूझ रहे हैं। और साथ ही सूर्य की किरणों में लगातार पृथ्वी के तापमान और गर्मी में भी बढ़ोत्तरी होती जा रही है। यू तो सूर्य का प्रकाश, पृथ्वी पर जन जीवन के लिए बहुत आवश्यक है। (लेकिन इसके साथ ही सूर्य से निकलने वाली हानिकारक अल्ट्रावॉयलेट किरणें, गर्मियों के मौसम में अपने उच्चतम स्तर पर होती हैं।) दोनों ही समस्यायें अपने आप में अत्यन्त चिन्ताजनक हैं। क्योंकि दोनों का ही मानव स्वास्थ्य पर गंभीर प्रभाव पड़ता है। ऐसे में हमें आवश्यकता है कि हम अपनी जीवनशैली में थोड़ा सा बदलाव करें और सावधानी बरतें ताकि इन समस्याओं पर काफी हद तक नियंत्रण प्राप्त किया जा सके।

जैसा कि आप सभी जानते हैं कि मनुष्य की तीन भौतिक आवश्यकताएं हैं, रोटी, कपड़ा और मकान। इस लेख में हम अल्ट्रावॉयलेट सुरक्षात्मक वस्त्रों के विषय में चर्चा करेंगे। वस्त्रों को हम द्वितीयक त्वचा भी कहते हैं। क्योंकि यह हमारी त्वचा के हमेशा सम्पर्क में रहता है। इसलिए हमारे लिए वस्त्रों की संरचना, प्रकार तथा उनकी देखभाल का ज्ञान होना आवश्यक है ताकि उचित चुनाव करके हम बहुत सारी स्वास्थ्य सम्बन्धी बीमारियों से बच सकें। कपड़ों में इन किरणों को सोखने, परिवर्तित करने और मोड़ने की क्षमता होती है। लेकिन सभी सामान्य वस्त्र उपयुक्त सुरक्षा प्रदान करने में समर्थ नहीं होते हैं।

अल्ट्रावॉयलेट किरणों के मुख्य हानिकारक प्रभाव :

- अधिक समय तक इन किरणों के सम्पर्क में रहने से त्वचा में धब्बे, चकत्ते पड़ना, झुलसना और त्वचा सम्बन्धी कैंसर होने का खतरा बना रहता है।
- इन किरणों के कुप्रभाव से आँखों में मोतियाबिंद एवं अन्य क्षेत्र सम्बन्धी बीमारियाँ भी हो सकती हैं।
- इन्हीं किरणों के सम्पर्क में रहने के फलस्वरूप व्यक्ति उम्र से पहले ही वृद्ध दिखाई देने लगता है क्योंकि ये किरणें झुरियाँ बढ़ाने का कारण भी होती हैं।

वस्त्रों का चुनाव करते समय सामान्य ध्यान देने योग्य बातें :

1. **वस्त्रों की संरचना:** वस्त्रों की बुनाई जितनी सघन होगी उतना ही वह पैराबैंगनी किरणों को कपड़े से भीतर प्रवेश करने से रोकेंगी और इस प्रकार अधिक सुरक्षा प्रदान करेंगी। कपड़े को बनाने के लिए ताने (सीधा धागा) और बाने (आधा धागा) का प्रयोग होता है। ताने और बाने के बीच जितने कम छिद्र होंगे उतना ही प्रकाश के आर-पार जाने से रोकेंगी।

मोटा और अपारदर्शी कपड़ा भी अल्ट्रावॉयलेट किरणों से पतले एवं पारदर्शी कपड़े की अपेक्षा अधिक सुरक्षा प्रदान करता है। घर के भीतर आप पतले एवं पारदर्शी कपड़े पहन सकते हैं क्योंकि हवा के आदान-प्रदान होने के कारण वे आरामदायक लगते हैं। वीवन कपड़ा, नीटेड कपड़े की तुलना में अल्ट्रावॉयलेट किरणों के प्रभाव से बचाने में अधिक प्रभावशाली होता है।

2. **रेशा प्राप्ति के स्रोत :** प्राकृतिक स्रोत से प्राप्त रेशे जैसे: सूती, रेशमी एवं ऊनी कपड़े, कृत्रिम रेशों से बने, कपड़े की तुलना में अल्ट्रावॉयलेट किरणों से बचाने में अधिक उपयोगी होते हैं।

3. रंगों का महत्व : धूप में सफेद कपड़ों की अपेक्षा रंगीन कपड़े अल्ट्रावायॅलेट किरणों से अधिक सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसलिए गर्मियों में गहरे रंग के फेस कवर एवं वस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए। कुछ प्राकृतिक स्रोत में प्राप्त रंग जैसे प्याज़ के छिलके से रंगे हुए कपड़े की यू. पी. एफ. की मात्रा भी कृत्रिम रंगों से रंगे हुए वस्त्रों की अपेक्षा अधिक होती है।

यू. पी. एफ. वैल्यू कपड़े की अल्ट्रावॉयलेट किरणों से बचाव को मापने की इकाई है। जिस वस्त्र की यू. पी. एफ. वैल्यू जितनी अधिक होगी वह उतनी ही अधिक, अल्ट्रावायॅलेट किरणों से सुरक्षा प्रदान करेगा।

4. फिनिशिंग : आजकल बाज़ार में विभिन्न प्रकार के कपड़ों की अल्ट्रावायॅलेट किरणों के बचाव को मापने की विधि सूर्य से निकलकर पृथ्वी पर पहुँचने वाली किरणों में प्रमुख तीन प्रकार की किरणों जैसे इन्फ्रारेड (Infrared) दृश्य किरणें (visible light) और पराबैंगीनी किरणें पाई जाती हैं। पराबैंगनी किरणें विद्युत चुम्बकीय किरणें होती हैं जो कि तीन घटकों से मिलकर बनी होती हैं।

जैसे : यू. वी. ए. (U.V.A) इनकी लम्बाई 400 से 320 नैनो मीटर होती है।

यू. वी. बी. (U.V.B) इनकी लम्बाई 320 से 280 नैनो मीटर होती है।

यू. वी. सी. (U.V.C) इनकी लम्बाई 280 से 100 नैनो मीटर होती है।

यू. वी. ए. एवं यू. वी. बी. किरणें स्वास्थ्य के लिए अधिक हानिकारक होती हैं। यू. वी. सी. किरणों की लम्बाई कम होने के कारण यह पृथ्वी तक बहुत कम मात्रा में पहुँच पाती है। फलस्वरूप इनका हानिकारक प्रभाव कम होता है।

अल्ट्रावायॅलेट किरणों के हानिकारक प्रभाव से सुरक्षा प्रदान करने वाले वस्त्रों को यू.वी. सुरक्षात्मक वस्त्र भी कहा जाता है एवं वस्त्रों की अल्ट्रावायॅलेट सुरक्षा मापने के लिए अल्ट्रावायॅलेट सुरक्षात्मक कारक (Ultra Violet Protection Factor) इकाई का प्रयोग किया जाता है। जिस वस्त्र की यू. वी. एफ. वैल्यू जितनी अधिक होगी वह उतनी अधिक सुरक्षा प्रदान करेगा। यू. पी. एफ. वैल्यू के आधार पर वस्त्रों को तीन श्रेणियों में बाँटा गया है।

यू. पी. एफ. सुरक्षा श्रेणी:

क्रमांक न.	यू. पी. एफ. वैल्यू	सुरक्षा
1	15 – 24	अच्छी सुरक्षा
2	25 – 29	ब्हुत अच्छी सुरक्षा
3	40 – 50 और इससे उपर	स्बसे अच्छी सुरक्षा

5. वस्त्रों की सिलाई : गर्मियों में तंग फिटिंग के वस्त्रों के उपयोग से बचना चाहिए। क्योंकि जब कपड़ा पहनने पर खिंचाव उत्पन्न होगा तो सिलाई के टाँकों की जगह छिद्र बढ़ने लगेंगे। इस प्रकार वस्त्रों की अल्ट्रावायॅलेट किरणों के प्रभाव बचाने की क्षमता भी घट जायेगी। इसलिए ढीले वस्त्रों का प्रयोग करें और कोशिश करें कि वस्त्रों से अपना अधिकांश शरीर ढका रह सके इससे आप सूर्य की किरणों के सीधे सम्पर्क में कम आयेंगे।

6. वस्त्रों की धुलाई: नये सूती वस्त्रों को हमेशा धोने के बाद पहनना चाहिए क्योंकि सूती वस्त्रों को धोने से वस्त्रों की बुनाई सघन हो जाती है। और अल्ट्रावायॅलेट किरणों से बेहतर सुरक्षा प्रदान करते हैं। धुलाई के समय प्रयोग होने वाले पदार्थ जैसे नील कलफ/मांड और चमक बढ़ाने वाले उत्पाद इत्यादि भी कपड़े की अल्ट्रावायॅलेट किरणों से बचाव की क्षमता को बढ़ाते हैं। इसलिए इनका प्रयोग अवश्य करना चाहिए। *

फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन

नरेंद्र कुमार, कमला मलिक[1] एवं कनिष्क वर्मा
कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल अवशेष को खेतों में गला कर खेतों में पोषक तत्वों की कमी को पूरा किया जा सकता है। ऐसा करने से खेतों की भूमि की भौतिक और रासायनिक स्थिति एक समान बनी रहती है और फसल उत्पादन चक्र का पारिस्थितिकी संतुलन भी बना रहता है। तथापि धान के भूसे का प्रबंधन एक बहुत बड़ी चुनौती है क्योंकि सिलिका की मात्रा अधिक होने के कारण चारे में यह इस्तेमाल नहीं किया जाता। चावल– गेहूँ के फसल चक्र में धान अवशेष प्रबंधन की भूमिका बहुत अधिक बढ़ गई है क्योंकि आजकल अधिकतर फसलों की कटाई मशीनों द्वारा की जाती है जिस से खेतों में फसलों के अवशेष बहुत अधिक बचते हैं। धान के अवशेष प्रबंधन में किसानों के पास मुख्यत: जलाना, खेतों की ज़मीन में मिला देना, सतह पर छोड़ देना, पलवार या खेतों में से उखाड़ देने का विकल्प बचता है। किसान स्थिति के अनुसार इनमें से कोई भी विकल्प चुन लेता है।

फसल अवशेष को जलाना : भारत में धान के अवशेष का परंपरागत रूप से मवेशियों के चारे में या अन्य इस्तेमाल जैसे शेड बनाने में किया जाता है। पिछले कुछ समय से जैसे–जैसे मशीनीकरण बढ़ा है, खेतों में अवशेष की मात्रा बढ़ने लगी है। ये फसल अवशेष अगली फसल के लिए खेत की तैयारी और बुवाई में हस्तक्षेप करते हैं। इससे तुरंत निपटारण के लिए किसान खेतों में ही इस अवशेषों को आग लगा देते हैं। इससे मिट्टी में मौजूद बहुत से पोषक तत्व और कार्बनिक पदार्थ नष्ट हो जाते हैं। औसतन एक हैक्टेयर में अवशेष को जलाने से 13 टन कार्बन डाईऑक्साइड वातावरण में फैलती है। यह वातावरण को प्रदूषित करती है और बहुत सारे फायदेमंद जीवों और कीट पतंगों को नुकसान पहुँचाती है।

फसल अवशेषों को जलाने के कुछ फायदे भी हैं। जलाने से खेतों की ज़मीन में मौजूद हानिकारक कीट व रोगजनक कीड़े मर जाते हैं। खेतों में अवशेष के निपटारण के लिए अवशेषों को जलाना सबसे आसान और सुगम प्रक्रिया है। इससे अगली फसल की बुवाई के लिए खेत जल्दी खाली हो जाता है। इससे बीज अंकुरण और उनकी स्थापना सहज ही हो जाती है।

सतह प्रतिधारण और पलवार : प्रत्यक्ष ड्रिलिंग सतही पलवार के अंदर वह प्रक्रिया है जिसमे हम पिछले फसल के बचे हुए अवशेषों को बिना मिट्टी में मिलाये सीधा छोड़ देते हैं। खेतों की सतह पर फसल के अवशेषों को ऐसे ही खुला छोड़ देने से उपजाऊ सतही मिट्टी का हवा और पानी की वजह से होने वाला अपरदन कम हो जाता है। परन्तु बहुत अधिक अवशेषों को सतह पर छोड़ देने का नुकसान भी है, इसमें बहुत सी मशीनें खेतों में अच्छे से कार्य नहीं कर पातीं। जिस वजह से अगली फसल के ऑपरेशनों में बहुत परेशानी आती है। किसान आमतौर पर इस तरह की प्रणाली का इस्तेमाल वहां करते हैं जहाँ फसल की कटाई के बाद अगली फसल लेने के लिए खेतों में जुताई नहीं की जाती और उसमें सीधा अगली फसल की बिजाई कर दी जाती है।

कुछ या पूरे अवशेषों को खेतों में छोड़ देना कुछ परिस्थितियों में एक अच्छा

[1]सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

विकल्प साबित होता है। ये अवशेष कुछ समय के बाद मिट्टी में मिल जाते हैं जिससे ऊपरी 5-15 सैं.मी. सतही मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ और नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ जाती है। ये अवशेष ही मिट्टी को बहुत से अपरदन कारकों से बचाते हैं। फसल के अवशेषों को जलाने की बजाय सतह पर छोड़ देने से मिट्टी में 46 प्रतिशत नाइट्रेट, फसल द्वारा 29 प्रतिशत अधिक नाइट्रोजन का उपयोग और 37 प्रतिशत अधिक उपज के प्रमाण पाए गए हैं। खेतों में अवशेषों को छोड़ देने के फायदे और नुकसान दोनों हैं, यह दोनों फायदेमंद और हानिकारक जीवों को निवास स्थान प्रदान करती है। अवशेषों से परपोषियों को नाइट्रोजन फिक्सेशन के लिए कार्बन सब्स्ट्रैट मिलता है, मिट्टी में माइक्रोबियल गतिविधयां, कॉर्बन बढ़ाती हैं। इस तरह से अगली फसलों में नाइट्रोजन की आवश्यकता को कम किया जा सकता है। खेत तैयार करते समय यदि फसल अवशेषों में यूरिया डाल दें तो यह जल्दी से मिट्टी में मिल जाता है।

अवशेषों को मिट्टी में मिलाना : फसल की कटाई के बाद बचे हुए अवशेषों को आंशिक या पूर्ण रूप से मिट्टी में मिलाना इस बात पर निर्भर करता है कि हमने किस तरह का तरीका कटाई के लिए इस्तेमाल किया है। खेतों में जुताई करना अवशेषों को मिट्टी में मिलाने का सबसे बढ़िया तरीका है। अवशेषों को मिट्टी में मिला देने से बहुत से पोषक तत्वों की मिट्टी में कमी पूरी हो जाती है और इन्हें लम्बे समय तक मिट्टी में सहेज कर रखा जा सकता है। बचे हुए अवशेषों को मिट्टी में मिलाने से हो सकता है एकदम से फसल उत्पादन में बढ़ोत्तरी न हो परन्तु कालांतर में इसका प्रभाव निश्चित रूप से देखने को मिलता है। जिन खेतों में खनिज उर्वरकों का इस्तेमाल किया जाता है और फसल अवशेषों को जुताई करके मिट्टी में मिला दिया जाता है, वहाँ पर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम और सिलिकॉन की मिट्टी में कोई कमी नहीं होती और ये लम्बे समय तक मिट्टी में बने रहते हैं।

हाल ही में किये गए अनुसंधानों से पता चला है कि जल्दी और सूखे हुए अवशेषों को यदि हम मिट्टी में 5-10 सैं.मी. तक मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देते हैं तो इससे मिट्टी में हवा का प्रसार बढ़ता है। इससे मृदा की उर्वरता में भी हमे लाभदायक परिणाम मिलते हैं। मिट्टी की ऊपरी सतह में अवशेषों को मिला कर इसे दो से तीन सप्ताह तक खेत को खाली छोड़ देना चाहिए। दूसरी फसल लेने से पहले खेत को कम से कम 30 दिनों के लिए खाली छोड़ देना चाहिए।

फसल अवशेषों को मिट्टी में मिला देने के निम्नलिखित फायदे हैं :

1. मृदा में कार्बन की पूर्ति को एरोबिक अपघटन द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। लगभग 50 प्रतिशत कॉर्बन की 30-40 दिन में पूर्ति हो जाती है।
2. ऐसी जगह जहां बाढ़ आती है वहां मिट्टी में मौजूद लोहे के री-ऑक्सीडेशन में आसानी होती है।
3. मिट्टी के अंदर नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की मात्रा बनी रहती है।
4. अवशेषों को मिट्टी में मिलाने से खाली पड़ी ज़मीं पर खरपतवार नहीं उगते।
5. अवशेषों के मिट्टी में प्रबंधन से बिजाई के समय सिंचाई में उपयुक्त पानी की कम मात्रा में ज़रूरत पड़ती है।
6. इस तरह की मिट्टी को आने वाली अगली फसल के लिए तैयार करना आसान होता है। मिट्टी में नमी होने की वजह से इस पर ऑपरेशन करना बहुत आसान होता है।
7. ऐसा करने से वातावरण में मीथेन कम उत्सर्जित होती है।

अवशेष प्रबंधन का मिट्टी पर प्रभाव : अवशेष प्रबंधन का मिट्टी के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

मिट्टी के भौतिक गुण : अवशेष प्रबंधन से मिट्टी के बहुत से भौतिक गुण बदल जाते हैं जैसे कि नमी प्रतिधारण क्षमता, मिट्टी का तापमान, ढेले बनना, मिट्टी की बल्क डैन्सिटी, मिट्टी की सांद्रता और पानी को अपने अंदर से पार करने की क्षमता (हाइड्रॉलिक कंडक्टिविटी) पर प्रभाव पड़ता है। धान के अवशेषों की मात्रा खेत में पड़े रहने से सतही वाष्पीकरण कम होता है और पहले चरण के खेत सूखने की अवधि भी बढ़ती है।खाली पड़े खेतों की अपेक्षा उन खेतों में जहां अवशेष पड़े रहते हैं वहां खेत में नमी अधिक समय तक बरकरार रहती है। पूवालों की वजह से सूर्य की किरणें सीधा खेत की ज़मीन पर नहीं पड़तीं जिसके कारण मिट्टी के तापमान में भी असर देखा जाता है। खाली पड़े खेतों की अपेक्षा उन खेतों की मिट्टी का तापमान कम पाया जाता है। मिट्टी के अवशेष एक ऊर्जा अवरोधक का कार्य करते हैं जिसके कारण हवा और मिट्टी के तापमान में गिरावट पायी जाती है। मिट्टी के ढेले बनना इस बात पर निर्भर करता है कि मिट्टी में किस तरह के बांधने वाले तत्व मिट्टी में उपलब्ध हैं। ये कई तरह के प्राथमिक और द्वितीय तत्व होते हैं।

मिट्टी को जोड़े रखे जाने वाले पदार्थों में लोहे के ऑक्साइड और हाईड्रक्साइड, पौधों के जैविक पदार्थ, अवशेषों के सड़ने से बने पदार्थ, माइक्रोबियल सेल्स, सूक्ष्मजीवों के द्वारा उत्सर्जित पदार्थ और केंचुओं द्वारा उतसर्जित जिलेटिन्स पदार्थ हैं। पौधों के अवशेषों का सड़ना इस बात पर निर्भर करता है कि मृदा का तापमान कितना है, मृदा में नमी कितनी है और छोटे-बड़े किस तरह के सूक्ष्म जीव वहाँ पर उपलब्ध हैं। अवशेष प्रबंधन का प्रभाव मिट्टी की बल्क डैंसिटी और कोण इंडेक्स पर बड़ा ही परिवर्तनशील पाया गया है। मिटी में अवशेषों को मिला देने से मिट्टी की पानी सोखने की क्षमता और हाइड्रोलिक कंडक्टिविटी बढ़ जाती है। इसके साथ-साथ मिट्टी की सरंचना में भी सुधार होता है, मिट्टी में छोटे और बड़े पोरों की संख्या बढ़ जाती है। जिस मिट्टी में हम अवशेषों को सीधा मिट्टी में ड्रिल कर देते हैं उसमे हाइड्रॉलिक चालकता अवशेषों को जलाई गई मिट्टी से चार गुना ज़्यादा होती है।

मिट्टी की रासायनिक गुणवत्ता : मिट्टी की गुणवत्ता को मापने का एक महत्वपूर्ण तरीका मृदा की पी एच को मापने का है और इसे बड़ी आसानी से अवशेष प्रबंधन द्वारा नियंत्रण किया जा सकता है। (पीछे किये गए अनुसंधानों से पता चलता है की अगर ये कार्बनिक अवशेषों को मिट्टी में सूक्ष्मजीवों द्वारा अपघटन वापस किया जाता है, मिट्टी के पीएच को बढ़ाया जा सकता है) सिलिका युक्त अवशेषों में यह क्षमता होती है कि यदि इन्हें अम्लीय मिट्टी में मिलायें तो ये मिट्टी की फॉस्फोरस धारण क्षमता को कम कर देते हैं और मिट्टी के पीएच मान को बढ़ा देते हैं। जिससे मिट्टी में क्षार की मात्रा बढ़ जाती है। इस तरह से बना ये क्षार मिट्टी में मौजूद अम्ल को काटता है। इस तरह का अभ्यास पहाड़ी क्षेत्रों में, जहाँ अम्लीय मृदा पायी जाती हैं वहां किया जाता है।धान के अवशेषों को मिट्टी में मिलाने का फायदा उन क्षेत्रों में भी अनुभव किया गया है जहाँ बहुत अधिक बारिश होती है और मिट्टी अम्लीय है। इन क्षेत्रों में मिट्टी में ज़िंक, बोरोन और फॉस्फोरस की कमी होती है। ये क्षेत्र मुख्यत: पूर्वी भारत और बांग्लादेश के क्षेत्र हैं। यहां भी अवशेष का प्रबंधन मिट्टी में करने से फायदा अनुभव किया गया है। *

कृषि में फ्लाई ऐश का उपयोग

✍ **गौरव चोपड़ा, सविता रानी एवं लीलावती**
सूक्ष्मजीव विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार

फ्लाई ऐश जिसे राख या कुछ क्षेत्रों में राखी भी कहा जाता है यह कोयले से बिजली उत्पादन के दौरान निकलने वाले बारीक कण हैं। थर्मल पॉवर प्लांट में इस्तेमाल होने वाला लिग्नाइट कोयला अपने वज़न का लगभग 32% फ्लाई ऐश पैदा करता है। फ्लाई ऐश का मुख्य निपटान खाली खदानों को भरने या खाली ज़मीनों पर इकट्ठा करके किया जाता है। इन स्थानों से यह उड़कर वायु प्रदूषण या पानी के साथ बह कर जल प्रदूषण का कारण बनती है। फ्लाई ऐश में मौजूद लेड, क्रोमियम और पारे से दिमागी, गुर्दा और श्वसन संबंधित विभिन्न बीमारियां होती हैं। वर्तमान में, केवल 68% फ्लाई ऐश का विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग किया जाता है। इसलिए, बिजली उत्पादन द्वारा भारी मात्रा में उत्पन्न फ्लाई ऐश के निपटान के लिए पर्यावरण के अनुकूल रास्ता खोजना एक बड़ी चुनौती बन जाती है।

फ्लाई ऐश की विशेषताएँ

फ्लाई ऐश बहुत हल्की तथा बहुत महीन कणों की बनी होती है, इन कणों का औसत व्यास 10 माइक्रोमीटर से कम होता है। फ्लाई ऐश के कणों का घनत्व बहुत कम होता है तथा इनका सतही क्षेत्रफल मृदा के मुकाबले कहीं ज़्यादा होता है। फ्लाई ऐश की रासायनिक संरचना उसे पैदा करने वाले कोयले की गुणवत्ता और थर्मल पॉवर स्टेशनों की परिचालन स्थितियों के आधार पर भिन्न-भिन्न होती है। फ्लाई ऐश में सिलिकॉन, एल्युमिनियम, आयरन, टाइटेनियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस और सोडियम के ऑक्साइड होते हैं। फ्लाई ऐश के लगभग 90% द्रव्यमान में एल्यूमीनियम, सिलिकॉन और आयरन के ऑक्साइड होते हैं। सिलिकॉन चावल, गेहूं और टमाटर जैसे विभिन्न पौधों की कोशिका भित्ति को बेहतर शक्ति प्रदान करता है जबकि एल्यूमीनियम विभिन्न सड़न संक्रमणों में कवकनाशक का काम करता है। चावल,जौ और गेहूं जैसी मोनोकोट की जड़ें पूरे पौधे के वज़न का 5-10% सिलिकॉन अवशोषित कर सकती हैं जिसका उपयोग पौधे अजैविक और जैविक तनाव को कम करने में करते हैं।

मिट्टी की जैविक विशेषताओं पर फ्लाई ऐश का प्रभाव

मिट्टी के जैविक गुण उसमें मौजूद विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवों के कारण होते हैं। सूक्ष्मजीवों और अन्य छोटे जीवों की गतिविधियां मिट्टी की जैविक विशेषताओं का आधार बनती हैं। जड़ों के आसपास के क्षेत्र में मौजूद सूक्ष्मजीव पौधे की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये सूक्ष्मजीव राइजोबियम, एजोटोबैक्टर और माइकोराइजा जैसे फायदेमंद हो सकते हैं अथवा एग्रोबैक्टीरियम, की तरह हानिकारक भी हो सकते हैं। पौधे की वृद्धि के लिए मिट्टी में मिलाई गयी फ्लाई ऐश की मात्रा बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि यह फ्लाई ऐश मिट्टी की संरचना को बदल देती है और सूक्ष्मजीवों का प्रकार मिट्टी की संरचना पर निर्धारित होता है। 5-20% फ्लाई ऐश का मिट्टी में प्रयोग राइजोबियम, एंटेरोबैक्टर और कई अन्य बैक्टीरिया को बढ़ावा देता है जो पौधों के विकास में सहायता करते हैं जबकि उच्च मात्रा (>30%) में फ्लाई ऐश का प्रयोग सभी प्रकार के सूक्ष्मजीवों (बैक्टीरिया, कवक और एक्टिनोमाइसेट्स) के विकास को कम कर देता है। सूक्ष्मजीवों की मात्रा में कमी का मुख्य कारण फ्लाई ऐश में भारी धातुओं की मौजूदगी है, यह ठीक उसी प्रकार है जैसे हमारा तांबे के बर्तन में पानी पीना स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है क्योंकि तांबा एक भारी धातु है और यह जल सूक्ष्मजीवों के दुष्प्रभाव से मुक्त रखने में सक्षम होता है।

फ्लाई ऐश के मृदा में प्रयोग से लाभ

फ्लाई ऐश का उपयोग कृषि में किया जा सकता है क्योंकि इसमें विभिन्न धातु ऑक्साइड शामिल होते हैं जो मिट्टी में धातु आयनों के भंडार बन जाते हैं तथा पोषक तत्वों के माध्यम से पौधे द्वारा लिए जा सकते हैं। मिट्टी में फ्लाई ऐश के मिलाने के बाद धान, टमाटर, मक्का, गेहूं, आलू, गोभी, सूरजमुखी और कई अन्य फसलों की पैदावार में वृद्धि होने के प्रमाण विभिन्न शोध पत्रों में प्रकाशित हैं। यह वृद्धि उत्पादकता पीएच परिवर्तन, जल धारण क्षमता में वृद्धि तथा मिट्टी और राइजोस्फीयर (अर्थात पौधे की जड़ों के आस पास का क्षेत्र जिसमे विभिन्न सूक्ष्मजीव मौजूद होते हैं) में विभिन्न कारणों से परिवर्तित हो सकती है। फ्लाई ऐश का आमतौर पर क्षारीय पीएच होता है लेकिन यदि कोयले में सल्फर की मात्रा अधिक हो तो इसका पीएच अम्लीय हो सकता है। यह क्षारीय पीएच अम्लीय मिट्टी के पीएच को संतुलित कर सकता है और इसे बराबर या थोड़ा क्षारीय बनाता है, जो अधिकांश कृषि फसलों के लिए उपयुक्त होता है। पीएच को बढ़ाने के लिए परंपरागत रूप से चूने, डोलोमाइट या कैल्शियम कार्बोनेट को अम्लीय मिट्टी में मिलाया जाता है। ऐसा करने से मिट्टी का पीएच तो बढ़ जाता है लेकिन यह मिट्टी में कार्बन डाइऑक्साइड का एक स्रोत बन जाता है जो एक ग्रीनहाऊस गैस है और भूमंडलीय ऊष्मीकरण (ग्लोबल वॉर्मिंग) में योगदान करती है। चूने का मिट्टी में मिलाना मृदा में मौजूद सूक्ष्मजीव समुदायों को कम करता है और सूक्ष्मजीवों के नाइट्रोजन और कार्बन चक्रों को धीमा कर देता है। फ्लाई ऐश द्वारा मृदा का पीएच संतुलन का काम भली-भांति किया जा सकता है और मिट्टी में फ्लाई ऐश का उपयोग जिप्सम पर हमारी निर्भरता को कम कर सकता है। फ्लाई ऐश की निश्चित मात्रा मिलाकर बाजरा, गोभी, गन्ने और फलियों को अम्लीय मिट्टी वाले क्षेत्र में भी उगाया जा सकता है। एक शोध के अनुसार 50 टन प्रति हैक्टेयर फ्लाई ऐश को अम्लीय मिट्टी के साथ मिला कर फसल उगाने पर प्याज़ की पैदावार में 24% तक की वृद्धि संभव है ।

फ्लाई ऐश का सतह क्षेत्र मिट्टी के कणों की तुलना में अधिक होता है इसलिए यह मिट्टी के कंडीशनर का एक अच्छा दावेदार है। मिट्टी में फ्लाई ऐश के मिलाए जाने से मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ती है, जिस पर पौधे की वृद्धि निर्भर करती है। मिट्टी में फ्लाई ऐश के मिलाए जाने पर मिट्टी के थोक घनत्व में कमी आती है और इस कारण जड़ों के विकास में मिट्टी के

(शेष पृष्ठ 32 पर)

कार्नेशन फूल की खेती : एक महत्वपूर्ण विकल्प

राजेश लाठर, वंदना एवं गुरनाम सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, पंचकूला
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय हिसार

कार्नेशन एक बहुत ही सुन्दर एवं चमकदार फूल होता है। कार्नेशन फूल को आमतौर पर इसके वैज्ञानिक नाम ''डायनथस'' से भी जाना जाता है जिसका मतलब भगवान का फूल होता है। मूल रूप से यह यूरेयिया का फूल है। काटने के बाद भी फूल लम्बे समय तक सुरक्षित रहता है। व्यापारिक रूप से इसकी खेती विदेश में यूरोप, दक्षिण अफ्रिका, टर्की, नीदरलैंड, इज़राइल आदि कई जगहों पर की जाती है और भारत देश में आमतौर पर इस फूल की खेती महाराष्ट्र, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और उतराखंड आदि के कुछ पर्वतीय इलाकों में की जाती है। कार्नेशन फूल कई प्रकार के होते हैं जिनमें से तीन प्रमुख हैं:

1. एनुएल कार्नेशन 2. बॉर्डर कार्नेशन 3. परपीचुअल फ्लावरिंग कार्नेशन

फूल के आकार के हिसाब से भी कार्नेशन तीन प्रकार का होता है :

- **बड़े फूल वाला कार्नेशन :** इसके हर एक तने पर एक बड़ा फूल खिलता है। ये तीन फीट की ऊँचाई तक बढ़ता है।
- **मिनी कार्नेशन :** ये एक साथ गुच्छों में छोटे-छोटे खिलते हैं।
- **बौने फूल वाला कार्नेशन :** इसके एक तने पर कई छोटे फूल खिलते हैं। ये केवल 10-12 इंच लम्बा होता है।

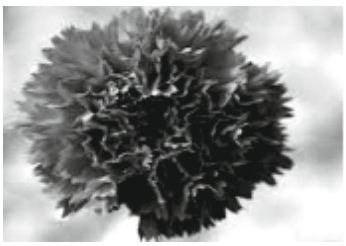

मिट्टी

कार्नेशन हर तरह की मिट्टी में उगाया जा सकता है लेकिन अच्छे जल निकास वाली मिट्टी इसके लिए सर्वोत्तम है। रेतीली दोमट मिट्टी जिसका पी. एच. मान 5.5-6.5 के बीच में होता है, कार्नेशन की खेती के लिए उपयुक्त है।

किस्म :

बड़े फूलों वाली किस्में : विलियमसिम, डस्टीपिंक, कोर्सो, केंडी मास्टर, सोलर, व्हाईट लिबर्टी, व्हाईट डोना, इत्यादि।

मिनी कार्नेशन किस्में : वेस्टमून, बारबारा, मैडीना, इन्दिरा, वीरा, बैरी, रोजा बेबे इत्यादि।

पौधे लगाने का समय

संरक्षित संरचना या ग्रीन हाऊस में कार्नेशन की खेती पूरे साल की जा सकती है। उत्तरी इलाकों में इसकी खेती के लिए सितम्बर से नवम्बर तक का समय उपयुक्त है और फरवरी-अप्रैल में इसकी पैदावार ली जा सकती है। कटिंग द्वारा सितम्बर के महीने में स्वस्थ पौधों से लगभग पैन्सिल जितनी मोटी 8-10 सैं.मी. लम्बी कटिंग लेकर उसकी नीचे की तरफ से एक-दो पत्तियां तोड़ दें। कटिंग के निचले सिरों को 0.2 प्रतिशत बाविस्टिन + 0.15 प्रतिशत डाइथेन एम-45 के घोल में 5 मिनट के लिए डुबोकर निकाल लें। उसके बाद उन्हीं कटिंग के निचले सिरों को 1000 पीपी एम (1000 मिली ग्राम प्रति लीटर) नैप्थलीन एसिटिक एसिड के घोल में 5 सैकिंड के लिए डुबोएं तथा रेत से भरे गमलों या क्यारियों में इन कलमों को लगायें। इस प्रकार 25-30 दिन में जड़ें निकल जाएंगी और पौधे अक्तूबर-नवम्बर में लगाने हेतु तैयार हो जाएंगे। पौधों को डोलियों पर लगाएं। डोली की चौड़ाई 1.2 मीटर, एक डोली से दूसरी डोली का फासला 75 सैं.मी. तथा पौधे से पौधे का फासला 30 सैंटीमीटर रखें।

खाद

गोबर की खाद 50 टन प्रति हैक्टेयर, यूरिया की खाद 800 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर, सिंगल सुपर-फॉस्फेट 1250 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर, म्यूरेट ऑफ पोटाश 160 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर।

अगर फॉस्फोरस डी ए पी से देना चाहते हैं तो डी ए पी सिंगल सुपर फॉस्फेट की मात्रा का 1/3 हिस्सा डालें तथा यूरिया की मात्रा का पांचवा हिस्सा कम कर लें। आधी नाईट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटाश क्यारियों में पौधे लगाने से पहले तथा बाकी बची आधी मात्रा पौधे लगाने से एक महीने बाद डालें।

सिंचाई

पौधारोपण के तुरन्त बाद सिंचाई अति आवश्यक है। कार्नेशन के पौधे को लगातार सिंचाई की ज़रूरत पड़ती है। गर्मियों में सप्ताह में 2-3 सिंचाइयां और सर्दियों में पंद्रह दिनों के अन्तराल में 2-3 सिंचाइयाँ करनी चाहिएं।

शाखाओं का चुटकना

पौधे लगाने के 30-35 दिन बाद जब शाखाओं पर 5-6 पत्तियाँ आ जाएं तब उनके सिरों को चुटक दें ताकि टहनियों में बराबर का फुटाव अधिक हो। फूलों की फसल जल्दी लेने की अवस्था में एक ही बार चुटकना काफी है परन्तु देर तक फूलों की फसल देने वाली किस्मों में एक ही पौधे से कई बार फूलों की फसल लेने के लिए मुख्य शाखा से निकली शाखाओं को भी सिरों से चुटकतें रहें। ऐसा करने से फूलों की अधिक फसल मिल सकेगी। अत: देर तक फसल देने वाली किस्मों में दो बार शाखाओं को चुटकें। पहली बार मुख्य शाखाओं को तथा दूसरी बार मुख्य शाखाओं से निकली अन्य शाखाओं को चुटकना चाहिए। फूलों का अच्छा आकार लेने के लिए कार्नेशन के पौधों में आवश्यकता से अधिक शाखाओं (जो 2-3 सैं.मी. से कम लम्बी हों) को व कलियों (जो 15 सैं.मी. आकार से कम हों) को काटकर विरलन किया जाना चाहिए।

कीड़ों की रोकथाम

निम्न कीट कार्नेशन की फसल में नुकसान करते हैं :

- **रेडस्पाइडरमाईट :** यह एक गम्भीर कीड़ा है जो पतों का रस चूसकर उनको पीला बना देता है और पैदावार कम होती है, इसकी रोकथाम के लिए डाईकोफोल 1.5 मिली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

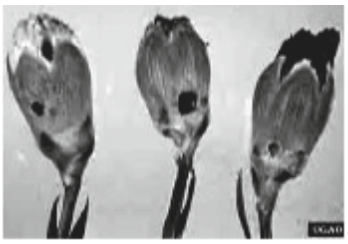

- **बडबोरर:** यह भी बहुत गम्भीर कीड़ा है, इसकी मादा बड के ऊपर अण्डे देती है और अण्डों से कीड़ा निकल कर बड के अन्दर घुसकर बड को खाता है। इसकी रोकथाम के लिए प्रोक्लेम 0.2 मि.ली. या इंडोक्साकार्ब 0.5 मि.ली. दवाई प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

बीमारियों की रोकथाम

उखेड़ा रोग: यह कार्नेशन की खतरनाक बीमारी है। धरातल के नीचे जो तना है वह गल जाता है और पौधा सूखकर मर जाता है। इसकी रोकथाम के लिए जो बीमार पौधे हैं उन को उखाड़ देना चाहिए और रिडोमील फफूँदनाशक को 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर ड्रैंचिग करें।

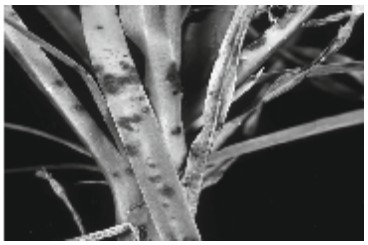

पतोंका धब्बा रोग: फफूँद द्वारा पतों के ऊपर धब्बे तथा शाखाओं का सड़ना शुरू हो जाता है। इसकी रोकथाम के लिए 0.2 प्रतिशत जीनेब या कैप्टान के घोल का छिड़काव करें।

फूलों की कटाई : फूलों की कटाई, बड के आकार तथा पंखुड़ी की वृद्धि पर निर्भर करती है। फूलों की कटाई सुबह के समय करनी चाहिए। मदर प्लांट और फूलों में नुकसान को बचाने के लिए कटाई तेज़ चाकू से सावधानीपूर्वक करनी चाहिए। कट फ्लावर के लिए हर दूसरे दिन कटाई करनी चाहिए। फूलों की कटाई के तुरन्त बाद फूलों को चार घंटे के लिए सिट्रिक अम्ल + ऍसकोर्बिक अम्ल 5 ग्राम प्रत्येक प्रति लीटर पानी के घोल में रखें।

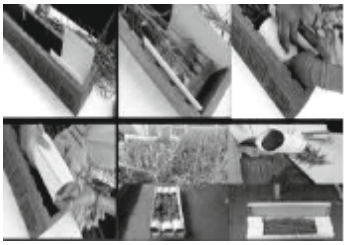

पैकिंग : फूलों की ग्रेडिंग करके 25 फूलों का बंडल बनाकर 30 सैं.मी. ऊँचे, 150 सैं.मी. चौड़े तथा 120 सैं.मी. लम्बाई वाले गत्ते के डिब्बे जिसके अन्दर किनारे-किनारे प्लास्टिक की पतली फिल्म की लाईनिंग की गई हो। कोल्ड स्टोर के लिए फूलों को 2-4°C तापमान पर भण्डारित करें। *

(पृष्ठ 30 का शेष)

अधिक घनत्व के कारण आने वाली बाधा दूर होती है। पत्तों पर फ्लाई ऐश के छिड़काव से रोगजनक संक्रमण में भी कमी आती है। टमाटर की जड़गांठ, चावल में तना छेदक और लपेट कीट तथा अन्य फसलों में भी फ्लाई ऐश के प्रयोग से कई बीमारियों की रोकथाम संभव है। मिट्टी में फ्लाई ऐश के मिलाए जाने पर लेट्यूस और दालों के पौधों की जड़ों में वृद्धि और बीज अंकुरण की दर उच्च होती है।

नाइट्रोजन और फॉस्फोरस का इस्तेमाल खेती में आम बात है लेकिन आज कल सिलिकॉन उर्वरक का भी उपयोग किया जाने लगा है और फ्लाई ऐश सिलिकॉन का एक अच्छा स्रोत होता है। जैविक खाद के साथ फ्लाई ऐश के इस्तेमाल से पौधों की वृद्धि, उपज और रोग प्रतिरोध में बहुत अच्छे परिणाम दिखाई देते हैं। एक शोध के अनुसार 100 टन प्रति हैक्टेयर फ्लाई ऐश को खाद और सिलिकेट सॉल्युबिलाइजिंग बैक्टीरिया के साथ प्रयोग करने से चावल में तना छेदक और लपेट कीट के 11.6% कम संक्रमण को देखा गया है।

फ्लाई ऐश के प्रयोग में सावधानियां

फ्लाई ऐश विभिन्न धातुओं का एक अच्छा स्रोत है लेकिन भारी धातुओं की मौजूदगी के कारण ज़्यादा फ्लाई ऐश का प्रयोग मिट्टी में मौजूद सभी प्रकार के सूक्ष्मजीवों पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है तथा इससे मिट्टी के जीव और सूक्ष्मजीवों की मात्रा बहुत कम भी हो सकती है। ये धातुएं पानी के साथ मिलकर ज़मीन के नीचे चली जाती हैं तो भूमिगत जल प्रदूषण का कारण बनती हैं इसलिए फ्लाई ऐश का प्रयोग मिट्टी की जाँच के बाद तथा सही मात्रा में ही करना बहुत ज़रूरी है। उच्च पीएच (10-12) वाली फ्लाई ऐश की अधिक मात्रा सूक्ष्मजीवों के श्वसन को रोकती है और मिट्टी की एंजाइम गतिविधि को प्रतिकूल रूप से बदल देती है। फ्लाई ऐश में थोरियम और यूरेनियम जैसे रेडियोधर्मी तत्वों की उपस्थिति इस मुद्दे को और अधिक गंभीर बनाती है।

निष्कर्ष

फ्लाई ऐश के उचित निपटान की खोज आज के समय की बड़ी आवश्यकता है। फ्लाई ऐश का कृषि में उपयोग करने की बहुत बड़ी गुंजाइश है क्योंकि इसकी मिट्टी कंडीशनिंग और सूक्ष्मजीवों के साथ सहक्रियात्मक प्रकृति है। उच्च फ्लाई ऐश वाली मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीवों में बेहतर तनाव सहिष्णुता होती है, इसलिए इनका उपयोग भारी धातुओं की उच्च मात्रा वाली मिट्टी में धातु का तनाव कम करने वाले जीवाणु खाद के रूप में किया जा सकता है। फ्लाई ऐश कृषि में महंगे उर्वरकों के भार को कम करने के लिए आसानी से उपलब्ध और सस्ती उर्वरक साबित हो सकती है। *

हरियाणा खेती एवं अन्य प्रकाशनों में विज्ञापन हेतु विज्ञापन दरें

पृष्ठ	साधारण (रु०)	छः या छः माह से अधिक समय के लिए विज्ञापन दर (रु०)	रंगीन विज्ञापन दर (रु०)
चौथा कवर पृष्ठ	2500/–	2400/–	6000/–
दूसरा कवर पृष्ठ	2400/–	2300/–	5800/–
तीसरा कवर पृष्ठ	2300/–	2200/–	5500/–
साधारण पृष्ठ	2000/–	1900/–	4700/–
आधा पृष्ठ	1200/–	1100/–	–

लिफाफे का मुख पृष्ठ	–	आकार 9 सैं.मी. × 11 सैं.मी.	4000/–
पिछला पृष्ठ	–	आकार 18 सैं.मी. × 22 सैं.मी.	4000/–

जी.एस.टी. - विश्वविद्यालय के नियमों के अनुसार।

विज्ञापन देने हेतु निम्न पते पर संपर्क करें :

प्रकाशन अनुभाग

गांधी भवन

चौ. च. सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय

हिसार (हरियाणा)

फोन : 01662-255234

रजिस्ट्रार ऑफ न्यूजपेपर्स, नई दिल्ली नं. 19451/69

हमारी निःशुल्क दूरभाष सेवाएं

हिसार : 1800 180 3001
सोमवार, बुधवार, शुक्रवार
समय : 10-12 बजे

बावल : 1800 180 4002
सोमवार, बुधवार, शुक्रवार
समय : 10-12 बजे

करनाल : 1800 180 3111
मंगलवार, वीरवार

प्रकाशक : डॉ. बी. आर. कम्बोज, निदेशक विस्तार शिक्षा (अतिरिक्त प्रभार) द्वारा चौ. च. सिं. ह. कृ. वि., हिसार के लिए डॉ. एच. एस. सहारण, सह-निदेशक प्रकाशन के प्रबन्ध में चौ. च. सिं. ह. कृ. वि. मुद्रणालय, हिसार से मुद्रित एवं प्रकाशित/दिनांक 30.3.2021/मासिक